रामाश्रम सत्संग डिजिटल प्रकाशन

संत-वचन

(भाग-9)

ब्रह्मलीन महात्मा

डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज

के प्रवचनों का संकलन

रामाश्रम सत्संग (रजि.)

9-रामाकृष्ण कॉलोनी, जी. टी. रोड,

गाजियाबाद-201009 (उ.प्र.)

प्रस्तावना

हम सब के लिए अत्यन्त सौभाग्य का विषय है कि रामाश्रम सत्संग के डिजिटल प्रकाशनों की श्रंखला में परम पूज्य गुरुदेव ब्रह्मलीन महात्मा डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज के प्रवचनों का संकलन - भाग 9 डिजिटल फॉर्म में उपलब्ध कराया जा रहा है.

मेरा ऐसा मानना है कि पूज्य गुरुदेव के प्रवचनों की जो अमूल्य वर्षा हो रही है उससे प्रेरणा लेकर तथा उनकी प्रवचन प्रसादी पाकर हम सबको भी अपने जीवन को वैसा बनाने का प्रयास करना चाहिए जैसा वे हमें बनाना चाहते थे. हम ग्वालियर के प्रोफ. आदर्श किशोर सक्सेना को उनके द्वारा दिए गए सहयोग के लिए साधुवाद देते हैं.

पूज्य गुरुदेव से प्रार्थना है कि उनके अमूल्य प्रवचनों की अमृत धारा के पवित्र प्रवाह को जन-जन तक पहुंचाने का अवसर हमें बार-बार प्राप्त होता रहे.

उम्मीद है कि पाठकों को हमारा यह प्रयास पसंद आएगा.

- डा. शक्ति कुमार सक्सेना

विषय–सूची

1. ईश्वर से क्या मांगे और क्या न मांगें ?.....1

2. जब तुम खुद तैयार हो जाओगे तो गुरु की मदद काम पूरा करेगी 9

3. परमात्मा की दयालुता 13

4. परमार्थ के मार्ग में सांसारिक बाधाएं 17

5. प्रेम और प्रीती.....22

6. भक्ति के अनेक रूप 24

7. भेंट 26

8. मन और माया से आत्मा को आज़ाद करो 31

9. मन को दुनियावी इच्छाओं से साफ़ करो 37

10. वास्तविक आनंद कहाँ है ? 40

11. विश्वास और श्रद्धा 47

12. संत मत में वेदान्तों के साधनों का समन्वय 51

13. सच्चे आनंद की प्राप्ती 55

14. सत्संग में आने का असली फ़ायदा 57

15. सर्व प्रथम कर्तव्य क्या है ? 59

16. साधक की उन्नति के लक्षणों की पहिचान स्व.निरीक्षण से संभव है 64

17. साधना के अनुभव 69

18. मनुष्यों की तीन प्रवत्तियाँ 72

ईश्वर से क्या मांगे और क्या न मांगे ? ईश्वर की इच्छा में ही सदा प्रसन्न रहें.

“वादए वस्ल चूं शबद नज़दीक ! आतिशे शौक़ तेज़ तर गरदद !! जितनी माशूक़ (प्रियतम) के मिलने की घड़ी नज़दीक आती जाती है, उतना ही मिलने का शौक़ तेज़ होता जाता है. यानी जितनी मौत की घडी नज़दीक आती जाती है उतना ही आनंद आता जाता है और बड़ी ख़ुशी होती है की कब मरूं और प्रियतम में समां जाऊं. मगर यह हालत किसकी है? उसकी जिसने अपनी आत्मा को ईश्वर में मिला दिया है और दुनिया को बुद्धि से भोग रहा है. उसका लगाव (attachment) ईश्वर से है. वह अपने संस्कार भी भोगता है और परमार्थ भी बना लेता है. वह मरते वक्त रोता हुआ नहीं जाता और फिर वापस भी नहीं आता क्योकि यहाँ इस दुनिया में उसका किसी से लगाव ही नहीं है

हमें अपने स्थूल शरीर पर जो दुःख-सुख अनुभव होता है वह हमें अपनी सुरत के द्वारा होता है. हमें चोट लगी, बड़ा दुःख हुआ. लेकिन यदि आपको सुरत का अभ्यास आता है, यानी आपने अपनी सुरत को नीचे से ऊपर ले जाने का अभ्यास कर रखा है, तो आप उस समय मन के स्थान (mental plane) पर आ जाईये, यानी अपने को स्थूल शरीर (physical plane) से ऊपर उठा लीजिये तो आपको वह कष्ट अनुभव नहीं होगा. इसे करके देख लीजिये.

इसको यों समझ लीजिये कि आपको जिस चीज़ में आनंद मिलता है, जेसे ताश, शतरंज या आपके किसी दोस्त की सौहबत, उसमें अपनी सुरत (attention) को जोड़ दीजिये. जब आपका ध्यान पूरी तरह से उस खेल या उस दोस्त में लग जायेगा तो आपको चोट का दर्द मालुम नहीं होगा या बहुत कम मालुम होगा. दर्द कहाँ मालुम होता है, जहाँ आपकी सुरत होती है. इसी तरह आपको कोई सदमा पहुंचा यानी कोई दोस्त मर गया या कोई सगा-सम्बन्धी मर गया या कोई मानसिक आघात (mental shock) पहुंचा तो उसे हटाने के लिए जो अभ्यास अपने सत्संग में सीखा है, उसके द्वारा अपनी सुरत को आत्मा के स्थान (spiritual plane) पर ले आइये. मन (mental plane) में दुःख नहीं होगा और यदि होगा भी तो बहुत हल्का सा होगा. तो हमने कर्म तो भोगा, जैसा हमने किया वैसा हमें मिला, लेकिन बेमालूम .

दरअसल जो ऊंचे अभ्यासी हैं वे कष्ट तो भोगते ही हैं लेकिन उस कष्ट का अनुभव अपने शरीर और मन पर उतना नहीं होने देते जितना साधारण मनुष्य को होता है. हमारे ही यहाँ एक सज्जन ऊंचे अभ्यासी थे

जिनकी किसी चीज़ का ऑपरेशन होने वाला था. उनको chloroform (बेहोश करने की दवा) दी जाने लगी तो उन्होंने डाक्टरों से कहा कि -

" साहब आप मुझे बेहोशी की दवा मत दीजिये. मैं थोड़ी देर concentrate (सुरत को एकाग्र करके ऊपर चढ़ा लूं) और जब मेरे शरीर में अमुक लक्षण पैदा हो जाएँ तब आप मेरा ऑपरेशन कर दीजिए. तो वे अपनी सुरत को mental plane से ऊंचा उठाकर कर spiritual plane पर ले गए यानी उन्होंने अपनी सुरत को आत्मा में जोड़ दिया. जब डाक्टरों ने उनके बताये हुए लक्षण उनके शरीर में प्रकट देखे तो उनका ऑपरेशन कर दिया गया और उन्हें कोई कष्ट नहीं हुआ.

यह नित्य प्रति की बातों में भी अनुभव होता है. हमें स्वयं कई बार अनुभव हुआ है. मोटर से उतरे हैं और पैर में कोई लोहे का टुकड़ा चुभ गया . कुछ ऐसा लगा कि चींटी सी चल रहीं है. घर जाकर देखा तो खाल फट गयी थी और खून बह रहा था. जहाँ दर्द ज़्यादा हुआ वहां अपनी सुरत को गुरुदेव के चरणों में, ईश्वर के चरणों में लगा दिया, दर्द महसूस भी नहीं हुआ. तो क्या दर्द थोड़े ही चला गया? दर्द तो दर्द वाली जगह ही रहा लेकिन जिस चीज़ के द्वारा, यानी सुरत के द्वारा वह दर्द अनुभव हो रहा था उसे उस जगह से हटा कर मन के स्थान पर ले गए और वहां से उठाकर आत्मा के स्थान पर ले गए. इसी तरह के अभ्यास के द्वारा मनुष्य दुनियां के दुखों से, चाहे वह शारीरिक कष्ट हो या मानसिक, विचलित नहीं होता.

हमारे जो पिछले कर्म हैं उनमें से कुछ हिस्सा हमें इस जीवन में मिलता है वही fate (तक़दीर) या प्रारब्ध कहलाता है. उसे हम यहाँ भोगते हैं और जो शेष रह जाते हैं, उन्हें संचित कर्म कहते हैं जो हमें भविष्य में भुगतने हैं, क्योकि एक ही जीवन में हमारे सब पिछले कर्म कट नहीं पाते हैं. जितने कर्म कटने हैं कट जाते हैं, शेष अगले जन्मों के लिए रह जाते हैं. कोई संत मिल जाये और मेहरबान हो जाये तो उसकी दुआ से कर्म भार हल्का हो जाता है और आसानी से कट जाता है.

हम सब दुनियां में फंसे हुए हैं इसलिए इस हालत में जो दुआ की जाती है उसका ज़्यादा असर नहीं होता. इस तरह से यानि मन को साफ़ करके जो दुआ की जाती है उसका असर ज़्यादा होता है. जो लोग इन्द्रियों में फंसे हैं और दिखाने के लिए ईश्वर से दुआ कर रहे हैं तो उनकी प्रार्थना का असर ज़्यादा नहीं होता.

दूसरी बात यह है कि जिन चीज़ों के लिए हम दुआ कर रहे हैं वे चीज़ें यदि दुनिया के पदार्थ हैं तो वे आपको उतने ही मिलेंगे जितनी आपके पिछले जन्म की कमाई है. इससे ज़्यादा नहीं मिलेंगे, और अगर ईश्वर

की दया उमड़े भी और वे चीज़ें जो आप चाहते हैं आपको मिल जाएँ (जैसे धन-दौलत, किसी सांसारिक व्यक्ति का प्रेम कीर्ति आदि) तो क्या यह आपके ऊपर ईश्वर की कृपा होगी या उसका आपके साथ ज़ुल्म होगा ? क्योकि जितनी ज़्यादा चीज़ें ईश्वर आपको बख्शता है उतनी ही आपकी इच्छाएं मोटी होती हैं और उतना ही ज़्यादा आप उनमें फंसते हैं. फिर एक इच्छा के बाद दूसरी इच्छाओं का अम्बार लग जाता है. मन कहता है कि " यह और मिल जाये ". इस तरह से तो आपका कभी भी छुटकारा नहीं होगा. तो ईश्वर ऐसी दुआ को कभी नहीं सुनता. हाँ , जब आप दुनियावी निचली इच्छाओं को छोड़कर ऊंची, यानी उसके प्रेम के लिए दुआ करते हैं, तब वह आपकी दुआ को सुनता है. आपकी जो कठिनाईयां और मुश्किलें उसके रास्ते में होती हैं उन्हें वह दूर कर देता है.

वह तो हमारा दयालु बाप है. जैसे, कोई माँ है, उसका बच्चा अनजान है और वह चाकू मांगता है, तो क्या वह माँ उसको छुरी दे देगी ? वह जानती है कि इससे बच्चा काट लेगा. लेकिन अगर बच्चा मिठाई के लिए ज़िद करता है तो वह उसे खाने के लिए मिठाई दे देगी. ईश्वर तो सच्चा बाप है और ऐसा प्यारा बाप है कि अगर उससे आप ऐसी चीज़ें मांगेंगे जिनसे आपका भविष्य ख़राब होगा तो वह ऐसी चीज़ आपको नहीं देगा. हम अज्ञान में फंसे हुए हैं. हम नहीं जानते कि हमारा भविष्य किस तरह सुखमय होगा. जो चीज़ हमको अच्छी लगती है हम तो उसी की इच्छा करते हैं चाहें उससे हमारा भविष्य बिलकुल सत्यनाश हो जाय. गुरु कृपा और सत्संग से जब हमारी बुद्धि शुद्ध होने लगती है और हमें होश आने लगता है यानी जब हमारा अज्ञान दूर हो जाता है तब हम पछताते हैं की हाय ! मैं कैसी बुरी हालत में था ? हम सोचने लगते हैं की मैं जो चीज़ भगवान से मांग रहा था उससे तो मेरा ढेर हो जाता, अच्छा हुआ जो वह चीज़ मुझे नहीं मिली.

ईश्वर सब जानता है कि हमारे पिछले जन्म के कर्म कैसे हैं और आगे के लिए वह हमें क्या दे जिससे हमारी हानि भी न हो और हमारा भविष्य उज्जवल हो. इसी वास्ते संत कहते हैं कि तुम्हारी जो बुद्धि है वह मलिन बुद्धि है. तुम जिस चीज़ में फंसे हो उसी में अपना फायदा समझते हो हालांकि वह तुम्हें नुकसान देने वाली है. ईश्वर इसको खूब समझता है और वह ऐसी कार्यवाही करता है जिसके करने से, और उसने हमें ऐसी जगह रखा है जहाँ रहने से, हमारे पिछले संस्कार भी कट जाएँ और आगे को हमारा भविष्य बेहतर होता चला जाय. अच्छा होना यह है कि सुख के धाम की तरफ, जहाँ आनंद ही आनंद है, उस तरफ हमारा रुख़ (झुकाव) हो जाय और हम उस रास्ते पर चलने लगें. उसने हमें ऐसी जगह रखा है और हमें ऐसी चीज़ें दी हैं जिसमें हमारा फायदा है. इसीलिए संत कहते हैं कि जिस हालत में भी ईश्वर ने रखा है उसी में खुश रहो , उसी हालत

से सहयोग करो - यानी 'राज़ी ब रज़ा" कि रवायत पर चलकर खुश रहो. इसी में तुम्हारा सबसे ज़्यादा फायदा है. जब मनुष्य की यह धारणा बन जाती है तो उसे मन की शांति मिलने लगती है.

आप दुनियां को नहीं बदल सकते. दुनियां में तो आपको पिछले संस्कारों के मुताबिक चीज़ें मिलेंगी. जो सजा है वह भी आपको मिलेगी. जो आपके लड़के-बाले रिश्तेदार वगैरा हैं, सब अपनी-अपनी तक़दीर और अपने -अपने संस्कार भोग रहे हैं. हमें परेशानी इसलिए होती है कि हमें ईश्वर ने जिस हालत में रखा है हम उसका विरोध करते हैं और उसको कर्स करते हैं, उसका विरोध करते हैं कि ईश्वर ने हमको ऐसी हालत में रखा है. दूसरी बात यह है कि हम संसार के या रिश्तेदारों, लड़कों , वगैरा के जीवन को अपनी इच्छा के अनुसार बदलना चाहते हैं. यांनी हम ख़ुद ख़ुदा बनना चाहते हैं. आप अपने लड़के को किसी विशेष विभाग में नौकरी दिलाना चाहते थे और आपके वह प्रयत्न असफल रहे और बाद में वह किसी और विभाग में गया तो अगर आप ग़ौर करके देखेंगे तो यह पाएंगे कि उसका भला इसी में था, जहाँ आप चाहते थे वहां नहीं. लेकिन आप यह समझते हैं कि हमारे से ज़्यादा बुद्धि किसी की नहीं है, यहाँ तक कि ईश्वर जिसने हमें बनाया है और इस संसार में रखा है उसकी भी हम आलोचना करते हैं. अपने को उससे ज़्यादा अक्लमंद समझते हैं. ऐसा तो ना-मुमकिन है, ऐसा तो हो ही नहीं सकता. इसी वास्ते हम दुर्दशा में हैं. अगर हम उस ईश्वर से सहयोग करने लगें और जिस हालत में उसने हमें रखा है, उसी में खुश रहें और यह समझे कि वह हमारा सच्चा बाप है, इसी में हमारी भलाई है.

पहली बात तो यह है कि ईश्वर है और अवश्य है. दूसरी यह कि हम यह समझें कि दरअसल वह हमारा सच्चा बाप है, सबसे प्यारा है वह सबसे ज़्यादा अक्लमंद है, वह हमसे वो सब काम करा रहा है जिसमें हमारा हित ही हित है. यदि आपको यह निश्चय हो जायेगा तो जिन हालतों में उसने आपको रखा है उसमें आप खुश रहेंगे और आपको मन की शांति मिलेगी. जब मन की शांति मिलेगी तभी आपका मन, आपका अभ्यास ऊपर की तरफ चलेगा. जिस वातावरण में इस समय हम रह रहे हैं अगर उसी में फंसे रहेंगे तो हम कभी भी इस माया जाल से नहीं निकल सकते. इसलिए जो सत्संगी भाई तरक़्क़ी करना चाहते हैं उनको यह चाहिए कि जिस हालत में भी ईश्वर ने उन्हें रखा है उस हालत में खुश रहें.

दुनियां में तरक़्क़ी तो हम कर रहे हैं कि हम बैरिस्टर हो गए या किसी और ऊंचे पद पर नौकर हो गए, और इच्छा यह है कि आगे और उन्नति करें. इसके लिए कोई और पढाई या कोर्स करना है जिसके वास्ते कॉलेज में नाम लिखा लिया है, और ईश्वर ने तुमको जो वेतन या रुपया दिया है उसमें से ज़्यादा हिस्सा उसी पढाई में

खर्च होता है, तो असंतोष कैसा ? अपना भविष्य बनाने के लिए अगर तुम रुपया दूसरी तरफ खर्च कर रहे हो और घर में तंगी हो रही है तो इससे परेशान क्यों हो ? ये तुम्हार वेवकूफी है या नहीं ? भाई, आप अपनी तरक़्क़ी के लिए ही तो कर रहे हो. आप अपनी आवश्यकताओं को क्यों बढ़ाये चले जा रहे हो ? हालाँकि वेतन काफी मिल रहा है और हमेशा आप रोते रहें, तो ऐसा आदमी क्या तरक़्क़ी करेगा ? हमने एक साहब को देखा जो केवल इण्टर या हाई स्कूल पास हैं. इस वक्त में सात सौ रूपये महीने पा रहे हैं. वो,पत्नी और एक बच्चा - इतना सा परिवार है . आज आठ- दस बरस हो गए, हमें उनसे मोहब्बत भी है, मगर आजतक जितनी चिट्ठियां आती हैं उनमें यही रोना होता है कि - ' हाय भाई साहब, पूरा खर्च किये जाता हूँ पर मेरा गुज़ारा ही नहीं होता, मैं तो मरा जाता हूँ .' अब बतलाइये कि क्या तुम ही रह गए हो कि ईश्वर सारी दुनियां का धन तुम्हीं को दे दे. अंग्रेजी तुमको लिखनी आती नहीं - हाई स्कूल पास लड़के क्या अंग्रेजी लिखेंगे ? और भी कोई खास लियाक़त तुममें है नहीं. कितनी बड़ी ईश्वर की कृपा है कि तुम्हें ग़ज़टेड आफीसर बना दिया और सात सौ या आठ सौ रूपये तुम्हे तनख्वाह मिलती है, लेकिन संतोष नहीं है, ईश्वर भले ही उनको सब कुछ दे दे लेकिन वो तो हमेशा उसकी शिकायत ही करते रहते हैं. ऐसा व्यक्ति परमार्थ पर क्या चल सकता है?

पहली चीज़ है कि संतोष हो, जिस हालत में हो उसी में खुश रहो - इसी में तुम्हारा भला है. अगर तरक़्क़ी करना चाहते हो और दूसरों को देख कर तुम्हारी भी तबियत करती है कि तुम भी रुपया-पैसा, शौहरत पैदा करो, तो तरक़्क़ी करने की कोशिश करो, मगर सहारा ईश्वर का लो. अगर कामयाबी हो जाती है, तो उसको धन्यवाद दो - 'हे ईश्वर! तेरी बड़ी कृपा है, और अगर कामयाबी नहीं होती तो भी ईश्वर को धन्यवाद दो - हे ईश्वर ! बड़ी कृपा है, न मालूम इस जगह पर पहुंचकर मुझे कितनी मुसीबत उठानी पड़ती. अपने बड़ी कृपा की जो मुझको सफलता नहीं दी. इस तरह से आपको संतुष्टि मिलेगी.

लेकिन हम अपने आप को कर्ता समझ कर जब कामयाबी नहीं होती है तो हम खुद को दोष देते हैं, या तक़दीर को, या ईश्वर को दोष देते हैं. यह तो असंतोष हुआ. जिस आदमी के मन में असंतोष है क्या वह कभी सुखी रह सकेगा? कभी नहीं. कितने ही हालात बदल जाएँ, दुनिया की कितनी ही चीज़ें उसको मिल जाएँ, लेकिन उसको कभी भी तृप्ति नहीं होगी. तृप्ति दुनियां की चीज़ों में नहीं है, वह तो अपने दिल में है. एक शख्स को पचास रूपये महीने मिलते हैं, वह संतुष्ट है, एक को पाँच सौ रूपये महीने मिलते हैं, पर फिर भी वह संतुष्ट नहीं है .

यह तो मन की बीमारी है, इसे दूर करो. जिस हालत में ईश्वर ने रखा है उसमें खुश रहो, तभी कुछ तरक़्क़ी कर सकते हो, मन के स्थान से ऊपर उठ कर आत्मा के स्थान पर आ सकते हो. जो व्यक्ति इन्द्रियभोग में फंसा है, हर वक्त उसी के सोच-विचार में फंसा रहता है, उसी की जुगाली करता है, क्या वह कभी भी समझदार, विवेकशील बन सकता है? कभी नहीं. उसकी तो सुरत निचली वासनाओं में जकड़ी हुई है. दिन-रात उसी ख्याल में डूबा हुआ विषय-भोग का आनंद लेता है और बाद में भी उसी को सोचता रहता है. ऐसा आदमी तो मनुष्य रूप में पशु की हैसियत में गिरता चला जाता है. अगर मनुष्य जीवन में उसकी यह हविश पूरी नहीं हुई और वह निचली वासनाओं में फंसता गया तो ख्वाहिश तो उसकी पूरी होगी लेकिन किसी निकृष्ठ योनि में. उस योनि में जाओ और उसको भोगो. वहां से जब उसकी तृप्ति हो चुकेगी तब फिर मनुष्य चोला मिलेगा. मन की चाहों में बहने वालों का यही हाल होता है.

सौदागर लोग तो हर चीज़ की नयी से नयी डिज़ायनें लाकर रखते हैं. बाजार गए, उस पर निगाह पड़ी, लेने गए थे सब्ज़ी , लेकिन मन को नहीं रोक सके और एक सुन्दर सा लैंप जो दुकान में देखा, मन मोहित हो गया, सब्ज़ी भूल गए और लैंप ले आये. घर में पहले से ही एक लैंप मौजूद है लेकिन आकर्षण-वश दूसरा ले आये. यह सब अनावश्यक खर्च किया और फिर रोते हैं कि हाय, हमारा खर्च पूरा नहीं होता. इसके ज़िम्मेदार तो तुम खुद हो.

हमारे गुरुदेव एक दिन कहने लगे - "श्रीकृष्ण, देखो तुम्हें एक गुर बताते हैं. अगर तुम दुनियां में खुश रहना चाहते हो तो अपनी इच्छाओं को कम करते चले जाओ. अगर एक या दो जूते मौजूद हैं तो तीसरा कभी मत खरीदो. अगर

दो-तीन सूट मौजूद हैं तो चौथा, पांचवां कभी मत बनवाओ. तुम खुद भी खुश रहोगे और दूसरों की मदद भी करते रहोगे. और जो तुमने अपनी इच्छाओं को बढ़ा कर अपनी ज़िंदगी खर्चीली बना ली तो खुद भी दुखी रहोगे और सारे परिवार को दुंखी करोगे, उनकी ज़रूरतों को पूरी नहीं कर सकोगे. दूसरी नसीहत उन्होंने यह दी कि जो व्यक्ति तुमसे नसीहत न मांगे, उसको कभी नसीहत मत दो. ज़ाहिरदारी में यह बात गलत सी लगती है. शेख सादी कहते हैं : " अगर बीना कि नाबीना व चाह अस्त, वगर ख़ामोश बिनशीनम गुनाह अस्त " - अर्थात अगर देखें कि अन्धा व्यक्ति जा रहा है और सामने कुआँ है तो चुप रहना और उसे रास्ता न बताना पाप है. मगर हमारे गुरुदेव (महात्मा रामचंद्र जी) ने तो इसके खिलाफ कहा है पर हमने उसको आज़माया है और बिलकुल ठीक पाया.

आप ज़बरदस्ती किसी की भलाई के लिए कुछ कहिये तो वह उसे नहीं मानेगा बल्कि उसके खिलाफ चलेगा और अपना नुक़सान करेगा. जब वह आपसे राय मांगे और आप उसे राय देंगे तब उसे वह मानेगा और उसकी क़दर करेगा. वह चाहे हमारा बेटा भी हो, इशारा दे दें, कभी ज़बरदस्ती न करें वर्ना वह कभी वैसा नहीं कर सकेगा. यह दुनिया का एक अजीब कायदा है कि आप बड़ी मौहब्बत से, उसकी भलाई के लिए, किसी को कोई चीज़ बताएं मगर वह यह समझता है कि इन्हें क्या पड़ी है, ज़रूर इनका कोई न कोई मतलब है जो यह ऐसी बात कर रहे हैं क्योकि दुनियां में सब मतलब से ही काम कराते हैं. आप कितना भी निस्वार्थ होकर उसे समझाएं लेकिन वह यही समझेगा कि इसमें तो आपका ही कोई स्वार्थ होगा. मेरा तो यह तज़ुर्बा है.

आप चाहें तो इसका तज़ुर्बा करके देख लें कि जितनी आप अपनी ज़िंदगी खर्चीली बनायेगे, उतने ही आप दुखी रहेंगे. आजकल महगांई बहुत बढ़ रही है और हर आदमी उससे तंग है लेकिन आप खुद सोचकर देखिये कि क्या हम भी इसके ज़िम्मेदार नहीं हैं ? हमने भी अपने जीवन को खर्चीला बना लिया है. हम यह चाहते हैं कि जिन चीज़ों की ज़रूरत नहीं है, जो घर में मौजूद हैं, उनका भी अम्बार लगा रहे. विलासता की वस्तुएं हमारी प्रति दिन की आवश्यकता की वस्तुओं में तब्दील होती जा रही हैं. जहाँ यह हाल है वहां मॅहगाई तो बढ़ेगी ही. हम इसके बिना नहीं रह सकते. खर्च जब बढ़ता है तो हम तंग होते हैं. फिर भला-बुरा कहते हैं लेकिन अपने आप को नहीं. इस काम के लिए बेचारा ईश्वर ही रह गया है.

अपनी आँख का तिल तो नहीं दीखता और दूसरों की आँख में गिरा हुआ छोटा तिनका भी दीख जाता है. अपना नुख़्स किसी को नहीं दीखता, दूसरे का छोटा सा दोष भी फ़ौरन दीख जाता है. यह मनुष्य का स्वभाव है. हम ईश्वर में भी दोष देखते हैं, उसे अन्यायी बताते हैं. ईश्वर तो रहीम करीम है, और यही नहीं वह तो बड़ा प्यारा बाप है, जो हमेशा दयालु है. अगर हमारे कर्मों को देखकर कि हम क्या-क्या कुकर्म कर रहे हैं, वह हमें सज़ा दे तो क्या हम दुनियां में रहने के लायक़ हैं? न जाने हमारी क्या दुर्दशा हो? वह माफ़ करता चला जाता है और हम हैं कि उसी को दोषी ठहराते चले जाते हैं - अपने आप को और अपने कर्मों को नहीं देखते.

यह हीन हालत सब तुम्हारे अपने कर्मों का नतीज़ा है. जितना तुमने किया उतना तुम्हें मिल रहा है. कोई चीज़ इस दुनियां में ऐसी नहीं है जो बिना क़ीमत के मिल जाए. जितनी क़ीमत देते जाओगे, उतनी चीज़ मिलती जाएगी. क़ीमत तो तुम देना नहीं चाहते और यह चाहो कि सारी दुनियां तुम्हें मिल जाए - ऐसा तो होगा नहीं. वहां तो इंसाफ है, जितना तुमने किया है उतना ही तुम्हें मिल रहा है. यह सब तुम्हारे कर्मों का ही फल है - चाहे

अच्छे या बुरे. हर हालत को सब्र से बर्दाश्त करना चाहिए. तभी तुम्हारा मन मुक्त होगा और आत्मा का अनुभव कर सकेगा .

माया ने यह शरीर बनाया, इन्द्रियां व मन बना दिया . यह काया मिटटी (पंच-तत्व) की बनी हुई है. जितनी भौतिक चीज़ें हैं वो भी ऐसी ही बनी हैं, उन पर मुलम्मा चढ़ा है (वे आकर्षक हैं) और उन्ही की वासनाएं हमारे अन्दर भर दीं हैं. उन वासनाओं को पूरा करने के लिए हम उन चीज़ों से लिप्त हो जाते हैं. यही मन और माया का जाल है. आत्मा का किसी को पता भी नहीं. वह अन्दर दबी पड़ी है, इसलिए यदि हमें सब भौतिक चीज़ें मिल भी जाएँ फिर भी हम सुखी नहीं रह सकते क्योकि हमारी आत्मा अशांत है, उसको जगाओ.

वासनाओं को उतना भोगो जितना ज़रूरी है, यह नहीं कि उनको छोड़ दो, क्योकि जब तक भोगोगे नहीं तब तक मन वहीँ लगा रहेगा. इसका यह मतलब भी नहीं कि वासनाओं में फंसे रहो. भोगो तो, मगर धर्मशास्त्र के मुताबिक भोगो. इस तरह भोगने से आप भोग भी लेंगे और इन्द्रियों की तृप्ति भी हो जाएगी. जैसे काम-वासना, सब इसमें फंसे हुए हैं. लेकिन उसका सही इस्तेमाल क्या है ? आपकी स्त्री और उसका संग भी धर्मशास्त्रों के अनुसार करो. अगर आपने उसको अधर्म के साथ भोगा, एक शादी की, दूसरी की, फिर तीसरी की, तो यह ख्वाहिश तो और बढ़ती चली जाएगी.

मन जिस चीज़ को ज़्यादा भोगता है, उससे वहां उसकी जड़ मज़बूत होती चली जाती है. अधर्म से भोगने में वह उस चीज़ का ऐसा आदी हो जायेगा कि वह जानवर की दशा में चला जायेगा. तो भोगा भी नहीं, यानी भोग की तृप्ति भी नहीं हुई, और तबाह हो गए . धर्म के अनुसार भोगने से आप उस भोग से उपराम हो जायेंगे, और जब उपराम हो जायेंगे तो आपकी सुरत नीचे से मुक्त हो जाएगी. तब आप मन के स्थान से उठकर आत्मा के स्थान पर आ सकते हैं.

इसी वजह से कहा गया है कि ईश्वर से मांगो तो उसका प्रेम मांगो, न कि दुनियावी माया में फंसाने वाली चीज़ें, और जो कुछ उसने दिया है उसी में संतोष करके हर हाल में खुश रहना सीखो. ईश्वर आपका कल्याण करें .

राम सन्देश : जून १९९४

तुम ख़ुद जब तैयार हो जाओगे तो गुरु की मदद काम पूरा करेगी

सभी जीव जन्तुओं की दुहरी ज़िंदगी है. दुनियावी (भौतिक) ज़िंदगी ऊपर है और रूहानी (आत्मिक) नीचे दबी हुई है. भौतिक जीवन अस्थायी है और आत्मिक जीवन हमेशा रहने वाला है. भौतिक जीवन नक़ल है. असली ज़िंदगी तो रूहानी है, दुनियां ने उसे ढक रखा है. जब तक दुनियाँ का तज़ुर्बा न होगा, यहाँ की वस्तुओं और सुख की नाशवानता का पता नहीं लग जायेगा, तब तक रूहानी ज़िंदगी की तरफ अभ्यासी नहीं मुड़ेगा. कैसे बढ़ेगा?

हमारी आत्मा जो दयाल देश से निकाली गयी और कालदेश यानी इस दुनियाँ में भेजी गयी उसकी वजह यह थी कि हमारे अन्दर ख्वाहिशात (कामनाएं- वासनाएं) भरी पड़ी थीं इसलिए परमात्मा ने दया करके हमें यहाँ भेजा. हम जब पैदा हुए और आँख खुली तो पहले माँ-बाप को देखा, भाई-बहिनों को देखा, फिर दुनियाँ की और चीज़ों को देखा और हमें उनसे मोह हो गया. आये थे दुनियां से निकलने लेकिन उलटे उलझ गए.

दुनियाँ के सब काम करते-करते जीव सब बातों का कर्ता अपने आप को समझने लगता है, लेकिन जब उसे होश आता है और दुनियाँ की बातों का तज़ुर्बा होता है तब वह देखता है कि जितने काम मैं कर रहा हूँ वह हमेशा रहने वाले नहीं हैं. शादी ब्याह किया तो ख़ुशी मिली लेकिन शादी के बाद जब बाल-बच्चेदारी और गृहस्थी के दुःख-मुसीबतें सामने आती हैं तो वह ख़ुशी जाती रहती है. संतान पैदा हुई तो ख़ुशी होती है लेकिन उसके मर जाने पर या अलहदा हो जाने पर क्या वही ख़ुशी क़ायम रहती है. रुपया पैदा करते हैं और उसे जोड़-जोड़ कर खुश होते हैं, क्या वह क़ायम रहेगा? बड़े-बड़े सेठ साहूकार एक दिन में दिवालिया हो जाते हैं, बड़े-बड़े राजे महाराजे खाने के लिए मोहताज़ दिखाई देते हैं. कहाँ गयी वह ख़ुशी? हम यहाँ आये हैं दुनियाँ का तज़ुर्बा करने के लिए. इसलिए यह ज़रूरी है कि इस दुनियाँ में जितना आवश्यक हो उतना उसमें घुसो यानी ज़रुरत के मुताबिक उसमें व्यवहार करो लेकिन उसे अपना लक्ष्य मत बनाओ. अगर तुमने उसी को सब कुछ समझ रखा तो ईश्वर के दरबार में कैसे घुसोगे?

लोग कहते हैं कि तरक़्क़ी नहीं होती. फंसे हुए हैं दुनियाँ में, एक दो दिन को शौकिया सत्संग में आये, घर पर भी कभी-कभी संध्या पूजा कर ली, नहीं तो दुनियाँ के धंधों में ही लगे रहते हैं. मकान बनवाने की ख्वाहिश हुई तो उसको बनाने के लिए रूपये के इंतज़ाम की फ़िक्र हुई ,क़र्ज़ लिया या और कहीं से इंतज़ाम किया. जब मकान बन कर तैयार हो गया और कर्ज़ा भी अदा हो गया तो यह फ़िक्र पड़ गयी कि कोई किरायेदार नहीं मिलता.जब किरायेदार मिल गया, माल इकठ्ठा होने लगा तो चोर-डाँकू आने लगे, रखवाली की फ़िक्र पड़ गयी.

क्या ज़िन्दगी भर यही करते रहोगे? ईश्वर का ध्यान कब करोगे? किसी को देखो तो वह बेटों की शिकायत करता रहता है की बेटे कहना नहीं मानते. यह तो दुनियाँ का क़ायदा है. वो अपना घर देखें या तुम्हारा देखें. इसमें शिकायत काहे की? बहुएं आती हैं अपना घर छोड़कर और बेटा बहू की नहीं सुनेगा तो क्या तुम्हारी सुनेगा? सासें शिकायत करती हैं कि जब से बहू घर आयी है तब से बेटा हमारी बात नहीं सुनता . क्या तुमने अपने बेटे को परमेश्वर समझ रखा है कि वही तुम्हारा पालन-पोषण करेगा? तुम अपना फ़र्ज़ पूरा कर दिया,अब यह तुम्हारे बेटे की ज़िम्मेदारी है कि वह अपना फ़र्ज़ पूरी तरह अदा करता रहे. अगर वह अपना फ़र्ज़ अदा नहीं करता तो इसमें दुखी होने की क्या बात है? अगर लड़कों के झंझट में पड़े रहोगे तो ईश्वर की तरफ तुम्हारा ध्यान कैसे लगेगा?

जो चीज़ हमें ईश्वर से दूर करती है, हमें चाहिए कि हम उसे छोड़ते चलें और जो चीज़ हमें ईश्वर के नज़दीक लाती है उसे अपनाते चलें. लेकिन हम ऐसा कर नहीं पाते. बात क्या है? अभी अधिकार पैदा नहीं हुआ है. संस्कार तो बना और मनुष्य जन्म भी मिला लेकिन अगर अधिकार भी बनता तो गुरु की ओट लेते जिससे मन से पिण्ड छूट जाता. लेकिन जो समझते हैं कि मन ही उनका साथी हो वो दरअसल ईश्वर को नहीं चाहते और मन के कहने ही पर चलते हैं. हर समय मन ही उन पर हावी रहता है.

एक बात और कही जाती है कि मन नहीं मानता. तुम्हें अपनी तो अपनी रिश्तेदारों तक कि फ़िक्र पड़ी है. उनकी उलझनों तक की ज़िम्मेदारी तुमने अपने ऊपर ले रखी है. कहते हैं कि फलां ने ये बुराई की और फलां इस तरह ख़राब है. क्या तुम इसी काम के लिए यहाँ आये थे और क्या यह काम तुम्हारे ही सुपुर्द है? ईश्वर तमाम दुनियां का मालिक है. तुम अपने आप को मालिक क्यों समझते हो? तुम ईश्वर का मुक़ाबला करते हो और हो कुछ नहीं. फिर कहते हो कि मन नहीं लगता.

फंसे तो तुम खुद हो, गुरु तुम्हें कैसे हटाए. तुम खुद निकलना चाहते हो और उसके लिए कोशिश भी करते हो मगर निकल नहीं पाते क्योकि तुम चाहते हो कि तुम्हारे दुनियाँ के सब काम भी पूरे हो जाएँ और दीन भी मिल जाए. यह नहीं हो सकता. एक गुरु नहीं अगर दुनियाँ के सारे गुरु भी ज़ोर लगाएं लेकिन जब तक तुम नहीं निकलना चाहोगे तब तक कोई तुम्हारी मदद नहीं कर सकता. संत तो दुनियाँ उजाड़ने आते हैं, आग लगाने आते हैं. मतलब यह है कि दुनियाँ में कर्म करते हुए उसमें फंसो नहीं, उसे मुख्य मत समझो. मन को और अपने आप को दुनियाँ के झंझटों से निकालो.

ख़ुदी (अहं या ego) क्या है? खुदी यह है कि मन चाहता है कि जिसको चाहूँ उसे अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ चलाऊं. धर्म पर चलने के बाद भी कोई-कोई दुखी रहता है, ऐसा क्यों है? ऐसा इसलिए है कि ख़ुदी बीच में है. चाहते हैं कि जैसा मैं कर रहा हूँ वैसा ही सब करें. जब तक दुनियाँ तुम्हारे सामने है और तुमने उसी को अहम् समझ रखा है, तब तक ईश्वर तो मिलता नहीं. इसलिए पहले अपनी सहायता आप करो. तुम खुद फंसे हो, मन की ज़ंजीरों में तुम खुद जकड़े हुए हो, अगर तुम उन ज़ंजीरों को काटना पसंद करोगे तब गुरु तुम्हारी मदद करेगा. गुरु की मदद मिलेगी तो तुम्हारा काम बन सकता है. फ़ारसी में कहा गया है :

हम ख़ुदा ख़्वाही व हम दुनिया ए दूँ !

ई ख्यालस्तों मुहालस्तो जिनूं !!

(भावार्थ: चाहते हो दुनियाँ भी मिल जाये और ईश्वर भी मिल जाये. ऐसा ख्याल करना पागलपन नहीं तो और क्या है?)

जब तक यह शरीर है तब तक ख़ुदी है, जीवन मुक्त होने पर भी पूरे तौर से ख़ुदी का चला जाना मुश्किल है. कुछ न कुछ यह बाकी रहती है. केले के पत्ते सूख कर गिर जाते हैं मगर उनका निशान पेड़ के तने में बाकी रहता है. यही हाल ख़ुदी या ममता का है. मगर यह ममता बंधन का बायस (कारण) नहीं होती. विचार दो तरह के होते हैं- बाहरी और अंदरूनी. किसी फल के छिलके के लिए गिरी (मगज़) की ज़रूरत है. न छिलके के वगैर गिरी रह सकती है और न गिरी के वगैर छिलका ही रह सकता है. जूता पहनकर तुम काटों पर चल सकते हो. इसी तरह इस आत्म-ज्ञान की जूता पहनकर तुम इस कांटेदार दुनियाँ में घूम सकते हो.

अज्ञान की वजह से इंसान ईश्वर की तलाश अपने से बाहर करता है. जब आदमी को समझ आ जाती है कि ईश्वर अन्दर है तो इसी समझ का नाम ज्ञान है. क्या तुमको मालूम है की परमात्मा इंसान के अन्दर किस तरह रहता है? वह इस तरह रहता है जैसे पिछले वक्त में शरीफ़ घरों की स्त्रियां चिकों के अन्दर रहती थीं. वह तो हरेक को देख सकती थीं लेकिन उनको न तो कोई देखता था और न कोई देख सकता था. परमात्मा बिलकुल इसी तरह रहता है. रौशनी देना चिराग़के लिए स्वाभाविक बात है. उसको रौशनी में कोई रोटी बनाता है, कोई जाल बनाता है और कोई भगवत गीता पढता है. इसमें रौशनी का अपना काम तो सबके लिए यकसा है.

जिस वक़्त मरते समय तीरों की शय्या पर भीष्म पितामह लेटे हुए थे तो उनकी आँखों में आंसू जारी थे. अर्जुन ने भगवान कृष्ण से कहा कि "प्रभु ! कैसे ताज्जुब की बात है कि हमारे परदादा जो सच्चे आदमी हैं, जिनका अपनी इन्द्रियों पर पूरा अख्त्यार है और जो आत्मज्ञान से भी भरपूर हैं, वह माया के भरम की वजह से रो रहे हैं." भीष्म ने खुद जबाब दिया - "भगवन ! आपको मालूम है कि मैं माया की वजह से नहीं रो रहा हूँ. मैं सोचने लगा हूँ कि आपकी लीला विचित्र और समझ से बाहर है. जिस ईश्वर का नाम लोग तमाम खतरों पर विजय प्राप्त करने के लिए लेते हैं वही परमात्मा पाण्डवों का रथवान बना हुआ है, उनका साथी और मददगार है फिर भी पाण्डवों के दुःख की कोई इन्तहा (सीमा) नहीं है.

राम सन्देश : नवंबर-दिसंबर, २००१

परमात्मा की दयालुता

ईश्वर की कृपा तथा अपने सँस्कार वश ही मनुष्य सत्संग में प्रवेश करता है . सत्संग में आकर बहुत से भाई यह चाहते हैं कि परमात्मा (श्री गुरुदेव) क्यों नहीँ अपनी कृपा शक्ति द्वारा हम लोगों का शीघ्र उद्धार कर देते ? मन और माया के बन्धन से आत्मा को शीघ्र क्यों नहीं निकाल देते ? यह एक समान्य प्रश्न है जो अक्सर सत्संगी भाईयों के हृदय में उठा करता है . सत्संग में प्रवेश करने पर जीव के हृदय में जगत और परमात्मा के बीच अन्तर्द्वन्द होने लगता है . जन्मोजन्म से वह जगत के बन्धनों , माया - मोह के जालों में फँसा है . सत्संग में आने के बाद प्रभु - प्रेम का आस्वादन उसे अच्छा लगने लगता है , किन्तु जगत के आकर्षण शीघ्र अपना प्रभाव नहीं छोड़ते . इस बीच की स्थिति में उसका हृदय मंथन करता रहता है . धर्म और अधर्म , प्रेम और मोह , सत और असत का राम - रावण युद्ध निरन्तर चलता रहता है . सत्संगी अपने व्यवहार के प्रति जागरूक रहता है , किन्तु पुराने संस्कार एवं माया - मोह के आकर्षण उसे अपनी ओर भरपूर खींचते रहते हैं . उसे मालूम होता है कि अमुक जगह वह अधर्म और असत व्यवहार में फँस गया है . ऐसी दशा में वह चाहता है कि क्यों नहीं परमात्मा रूप श्री गुरुदेव हमारी सम्भाल कर लेते हैं और हमेशा - हमेशा के लिए हमें इस भव - बंधन तथा माया मोह से मुक्त कर देते ?

बहुत से लोग जो सत्संगी नहीं हैं , दुनियादार हैं , वे भी ऐसी ही बातें करते हैं कि जब परमात्मा चाहेगा हमसे दुनियाँ छुड़ा देगा . मुझे अपनी ओर से इसकी कुछ चिन्ता नहीं करनी चाहिये . ऐसे लोगों का अहं बहुत ही पुष्ट होता है . माया - मोह का आकर्षण इन्हें कसकर घेरे रहता है . संतों की बातें उनके लिए बंजर भूमि में बीज डालने के समान है . फिर भी ईश्वर कृपा से उनके भी कभी न कभी शुभ संस्कार उत्पन्न होंगें . ऐसे सज्जनों और सतसंगी भाइयों के लिए यह बता देना आवश्यक है कि परमात्मा परम दयालु है . दयालुता का अर्थ है कि जिससे जीव का सबसे उत्तम लाभ हो , सबसे अधिक कल्याण हो , वही परमात्मा दया वश उसके लिये करते हैं . वैसे परमात्मा तो सर्वशक्तिमान हैं ही और वह जब चाहें आत्मा को क्षण भर में मन और माया के जाल से मुक्त करा सकते हैं . लेकिन जीव इसे बर्दाश्त नहीं कर सकेगा . जब तक मन सतदेश का वासी नहीं होगा अर्थात सतोगुणी नहीं होगा , तब तक आत्मा को उससे ज़बरदस्ती हटाने में तन और मन व्याकुल हो उठेंगें और उस पीड़ा को जीव कभी भी बर्दाश्त नहीं कर सकेगा . इसलिए परमात्मा की यह असीम दयालुता है की वह किसी के साथ ज़ोर ज़ुल्म नहीं करता . अपनी शक्ति का प्रदर्शन नहीं करता . आत्मा को ज़बरदस्ती ऊपर खींचने में जीव बेहोश हो जायेगा या उसे भारी बीमारी लग जायेगी . ऊँचे घाट का हल्का सा रस पाकर मन उसी में मस्त हो जावेगा और उसी मस्ती में पड़ा रहेगा . ऊपर का कार्य परमात्मा रूप है . इस स्थिति में मन पूर्णतः शाँत होकर आत्मा के आधीन हो जाता है . मन की यह दशा आत्मा को ज़बरदस्ती ऊपर खींचने से कदापि नहीं हो सकती . इसके अलावा परमात्मा का यह अटल नियम है कि जीव को अपने कर्मों का फल भोगना ही पड़ेगा . यदि ऐसा विधान नहीं होता तो पाप - पुण्य की परख ही नहीं रह जाती . जीव को बुरे कर्मों से रोकने का कोई

साधन ही नहीरह जाता . बुरे कर्मों द्वारा जीव का स्वप्न में भी उद्धार नहीं हो सकता था . वह और नीचे ही गिरता जाता है इसलिए ईश्वर - कृपा से यदि कोई सत्संग में प्रवेश करता है तो उसके पिछले बुरे संस्कार भी साथ रहते हैं . इसी कारण वह जाने - अनजाने नीचे की ओर गिरता रहता है . संत सतगुरु की शरण पकड़ने पर उसके पिछले संस्कारों के वेग में कमी आजाती है तथा उन्हीं की दया से उन संस्कारों के भोगने में उसे आसानी हो जाती है . अतः सच्चे भाव से संत -सदगुरु की शरण लेनी चाहिये . उन्हीं की कृपा से बुरे संस्कारों के फल आसानी से भोगे जा सकते हैं . और भविष्य में चढ़ना साधकों के लिए स्वाभाविक है . इससे उन्हें घबराना नहीं चाहिये . जो गिरता नहीं है वह ऊपर चढ़ने की सोचता कहाँ है ? लेकिन हर हालत में उसे श्री गुरुदेव में अपनी श्रद्धा अधिक मज़बूत करते जाना चाहिये और भविष्य के लिए बुरे कर्मों पर सच्चे दिल से पश्चात्ताप करना चाहिये तथा मन ही मन उन दुर्बलताओं पर विजय प्राप्त करने के लिए अपने श्री गुरुदेव से प्रार्थना करते रहना चाहिये . संत सदगुरु परमात्मा रूप होते हैं . वे जीव के अधिकार के अनुसार उसकी आत्मा को विषयों से खींचते हैं . सुरत के साथ यदि मन को भी नहीं खींचा गया या उसे जगत के विषयों से उपराम नहीं कर लिया गया तो केवल आत्मा के खिंचने से वह पुनः शीघ्र ही नीचे गिर जायेगी . इसलिए परमात्मा या सतगुरु शीघ्रता नहीं करते हैं .

परमात्मा का काम मारना नहीं , जिलाना है . काल मारता है , परमात्मा जिलाते हैं . शरीर के नाश होने पर आत्मा के साथ मन मिला रहता है . मन जब तक अपनी इच्छाओं को नहीं भोग लेता तब तक वह आत्मा को नहीं छोड़ता . इच्छाओं को भोगने के लिए मनुष्य जीवन ही एकमात्र साधन है जिसे परमात्मा कृपा करके हमें प्रदान करते हैं . काल इसे पसन्द नहीं करता . इसलिए वह मृत्यु के द्वारा जीव को मारता रहता है जिससे जीव अपनी समस्त इच्छाओं को भोग कर काल के चंगुल से हमेशा - हमेशा के लिये निकल जावे .अतः जीव का यह धर्म है कि वह सत्संग में आकर इच्छाओं से उपराम हो जाये .

संत भी मन को मारने की बात बतलाते हैं , किन्तु उनका मारना काल की मौत से भिन्न है . संतो के मारने का मतलब यह है कि तन और मन से आसक्ति समाप्त हो जाये जिससे आत्मा स्वतः असली रूप का परिचय प्राप्त कर ले . इस प्रकार की शिक्षा दी जाती है कि वह इस शरीर में रहते हुए इससे अलग हो जाये . इसके अलावा मन जिन - जिन वासनाओं में लिप्त है उनकी असारता का अनुभव कर ले और उनसे उपराम हो जाये . जगत तथा जगत की वस्तुओं की असारता के स्वयँ अनुभव कर लेने पर वह पुनः उनमें न फंसेगा तथा उनसे उपरति ग्रहण कर लेगा . इस प्रकार वह अपने कर्मों के फल से वंचित हो जायेगा . जब उसकी यह दशा हो जायेगी तब वह आत्मा को जगत के भोग के लिए नहीं खींचेगा. इसके विपरीत वह शाँत हो जायेगा और ऊपर के अभ्यास में जहाँ तक उसकी पहुँच है उस सीमा तक आत्मा का साथ देगा . यही परमात्मा द्वारा तन और मन का मारना है . फिर आत्मा स्वतः अपने आनंद का अनुभव करने लगेगी और उसे प्रभु -प्रेम का पान कराते रहते हैं . इसलिए परमार्थ शीघ्रता का कार्य नहीं है . इसमें जल्दबाजी नहीं की जा सकती . परमात्मा का यहीं वरदान है

कि वह जीव को अधिकार भेद एवं संस्कार अनुसार परमात्मा प्राप्ति का अवसर देते हैं . इसी में जीव का सच्चा उद्धार है . यही परमात्मा की दयालुता है .

अमृत वेला

प्रभात के समय जब एक प्रहर रात्रि होती है, उस शुभ अवसर को ब्रह्ममहूर्त कहते हैं. संतों ने इसको 'अमृत वेला ' कहा है. इसी समय को प्राचीन काल से ऋषिओं तथा महापुरुषों ने ईश्वर भजन के लिए निर्धारित किया हैं.

भक्ति के लिए सब समय ठीक हैं, परन्तु प्रातःकाल का समय ईश्वर भक्ति में विशेष सहयोग देता है. इस समय ईश्वर की दया का प्रभाव अधिक पड़ता है. मनुष्य दिन में परिश्रम करता है. उसका शरीर थक जाता है, इसलिए पहली निद्रा में वह सो जाता है. जब वह जागता है तो उस समय प्रातः के तीन - चार बजे का समय होता है. तब वह अपने को स्वस्थ तथा उत्साहपूर्ण अनुभव करता है. रात्रि को नींद में आत्मा मस्तिष्क से उतर कर कण्ठ या नाभि में स्थित हो जाती है. जब मनुष्य जागता है तब वह पुनः अपने स्थान पर आ जाती है. प्रातःकाल करोबार और व्यवहार की कोई चिन्ता नहीं होती. यह मन को एकाग्र करने का उचित समय है. इस समय मन स्वच्छ होता है और वृत्तियाँ इधर-उधर नहीं भागती. इस ब्रह्म महूर्त के समय जीव ईश्वर के अधिक निकट होता है. इस समय की भक्ति तथा मन की एकाग्रता का प्रभाव दैनिक व्यवहार पर भी पड़ता है. मनुष्य एकाग्रचित्त होकर अपना कार्य करता है. सूर्य के उदय होने के पश्चात वृत्तियाँ बिखर जाती हैं तथा एकाग्रता भंग हो जाती है.

अभ्यास भोजन के तुरन्त बाद नहीं करना चाहिये. अभ्यास के लिए पेट जितना ख़ाली हो उतना ही लाभदायक है. ब्रह्म महूर्त के समय भोजन हज़म होकर पेट ख़ाली रहता है. ब्रह्म महूर्त को साधारण मनुष्य रात्रि जानकर गहरी निन्द्रा में सोता है, ईश्वर भक्त उस समय जागता है, और जिस समय को दिन समझकर दुनियादार जागता है, उसको भक्तजन रात्रि समझते हैं. हे मन ! यदि तू प्रियतम के मुख के नूर का अनुभव करना चाहता है तो तू ब्रह्म महूर्त में जाग तथा कोमल शैय्या को त्याग कर किसी अन्धेरे कोने में बैठ. फरीद जी कहते हैं कि जो मनुष्य ब्रह्म बेला में सोता है वह इस परितोष से वंचित रह जाता है. जिसको निन्द्रा से प्रीति है वह ईश्वर की प्रप्ति कैसे कर सकता है?

मौलाना रूम कहते हैं- "ऐ जिज्ञासु! अपनी निन्द्रा को भूल कर रात्रि को जागने वालों के कूंचे में जाओ तो तुम देखोगे कि वे मजनू के समान चारों ओर से अपनी सुरति को खींच कर ईश्वर के चरणों में लगा कर बैठते

हैं. जैसे पतंगा दिये के प्रकाश पर अपने जीवन को न्यौछावर करने को तत्पर रहता है, ऐसे ही भक्तगण अपने आपको अर्पण कर देते हैं. ख़्वाजा कुतुबुद्दीन कहते हैं -" हे पुत्र, तू आधी रात नींँद को त्याग कर इस प्रतीक्षा में रह कि प्यारा तेरी ओर नज़र करे." ईश्वर रात्रि में ही प्रगट होते हैं. यदि कोई इस शुभ अवसर को खो देता है तो वह अपने से अन्याय करता है. दिन का समय कार्य -व्यवहार के लिये है परन्तु रात्रि का समय ईश्वर -भक्ति के लिए होता है. इसलिए पूरी रात्रि ईश्वर से बातें करने में व्यतीत करनी चाहिये . हे जिज्ञासु ! अगर तू रात को न सोये तो तुझे सदैव के लिए अमर पदवी प्राप्त हो जाए तथा

दिव्य-दृष्टि खुल जाए. तब तू दिव्य प्रकाश को देख सकेगा. तूने सहस्त्रों रात्रियाँ लोभ तथा लालसा की पूर्ति करने में खो दीं. यदि तू प्रियतम के लिए न सोये तो तेरा क्या बिगड़ता है ? भक्तजनों ने जो कुछ पाया वह रात में ही पाया. ऐसा भय मत कर कि न सोने से तू अस्वस्थ हो जाएगा. ईश्वर जीवन स्रोत है, उसके सम्पर्क में आने से तू निरन्तर स्वस्थ रहेगा तथा तेरी बुद्धि चेतनता प्राप्त करेगी. इस समय दिव्य - वाणी व प्रकाश का अनुभव होता है जिससे प्रायः सब दुःखों तथा पूर्व संस्कारों का नाश हो जाता है." महापुरुषों का कथन है कि रात्रि के समय आत्मा का प्रियतम से मिलाप होता है और सब आशाओं की पूर्ति होती है. जिनको रात्रि के गुणों का अनुभव हो जाता है उनका हृदय प्रकाशित हो जाता है. रात्रि का समय एकांत, शान्त तथा मौन होता है. इस समय अन्तर की आवाज़ सरलता से सुनाई देती है. आकाश में सितारों का विचित्र दृश्य होता है. उसकी सुन्दरता को देखकर सन्त-जन ईश्वर की विशालता के गुण गाते हैं. ब्रह्म-महूर्त सात्त्विक होने के कारण सब ही सरलता से मन को शान्त तथा एकाग्र कर सकते हैं. परन्तु पहली रात्रि को निन्द्रा से मुक्त होना अति कठिन है. यह तम का समय होता है.

दिन में यदि मनुष्य सो जाए तो रात्रि को जागने का अभ्यास सरलता से हो जाता है. भक्तजन उस समय सोते हैं जब दुनियादार काम करता है. जब दुनियादार सोता है, भक्तजन उस समय भजन करते हैं. यदि रात्रि को न जगा जाए, तो ईश्वर का नाम लेते-लेते सोना चाहिये. ऐसा करने से बुरे स्वप्न नहीं आयेंगे तथा जब नींँद खुलेगी तो मनुष्य अपने को भजन करता हुआ पायेगा.

राम संदेश : जनवरी , १९६८

परमार्थ के मार्ग में सांसारिक बाधाएँ

संत-महात्माओं और ईश्वर भक्तों के जीवन-चरित्र पढ़ने से यह मालूम होता है कि दुनियां के लोगों ने ईश्वर-भक्ति के रास्ते में बड़ी-बड़ी व्याधियां और मुसीबतें पैदा की है. ईसा और मंसूर को सूली पर चढ़ना पड़ा, मीरा को विष दिया गया, शम्स तबरेज़ की खाल उतारी गयी, गुरु तेग़बहादुर जी को जलते तेल से नहलाया गया, गुरु गोविन्द सिंह जी के बच्चों को जीते जी दीवार में चुनवाया गया. इस तरह की अनेकों मिसालें मिलती हैं. संत महात्माओं को दुनियां वालों ने हमेशा तंग किया, उन्हें तरह-तरह के दुःख दिए, जिससे वे सच्चे परमार्थ की कार्यवाही न कर सकें. घोर कलयुग आता जा रहा है. कौन जाने किस वक्त में क्या मुसीबत आएगी, इसका अंदाज़ नहीं हो सकता. लेकिन जो कुछ संतों और महापुरुषों ने कहा है उसे सोच कर रोंगटे खड़े हो जाते हैं. अगर यह अत्याचार न हो तो प्रभु के प्यार की परीक्षा कैसे हो, और उस प्यार में परिपक्वता कैसे आये? इसलिए जो मालिक को सच्चे दिल से प्यार करता है वही उन मुसीबतों को सहन कर सकेगा और भक्ति और परमार्थ के रास्ते से डगमग नहीं होगा.

यह दुनियाँ काल यानी शैतान और माया का पसारा है. काल ने सबको फ़ांस रखा है. परमार्थ-पथ पर चलना इस फंदे से अपने आपको निकालना है. लेकिन काल अपनी दुनियां से किसी को निकलने नहीं देता. जैसे-जैसे अभ्यासी परमार्थ-पथ पर अग्रसर होता जाता है, काल उसके लिए अधिकाधिक बाधाएँ पैदा करता है और जो पहुंचे हुए हैं, जैसे संत-महात्मा और साधुजन, उनके लिए मुसीबतों का रूप और भी भयंकर होता जाता है. सबसे पहले मुसीबत घर वालों की तरफ से पैदा की जाती हैं. भक्तों के पीछे जात-बिरादरी और छुआछूत की बाधा घर वालों की तरफ से लगती है. घर वाले रोकते हैं कि किसी तरह परमार्थी कार्यवाही न होने पावे, सत्संग में न जाने पावें. वे बदनाम करते हैं और हंसी उड़ाते हैं. यह सब भगवान की मौज़ और भविष्य में किसी अच्छाई के लिए होता है.

एक कहानी है. किसी घर में घडी नहीं थी. उस घर का एक आदमी घडी खरीद लाया और उसे दीवार पर लटका दिया. वह घडी हर समय टिक-टिक करती रहती थी. उस घर में एक अंधी बुढ़िया रहती थी. उसने न कभी घडी देखी थी और न वह उसकी क़दर जानती थी, घडी की टिक-टिक उसे हमेशा परेशान करती थी और वह बुढ़िया चाहती थी कि उस घडी को फेंक दे. लेकिन उसका बस नहीं चलता था. एक दिन उस घर में चोरी हो गयी. उस बुढ़िया ने कहा कि चोरी इस घडी की वज़ह से हुई है. इसके बाद एक-एक करके कई बच्चे बीमार पड़े. बुढ़िया ने कहा कि जबसे टिक-टिक वाली यह घड़ी इस घर में आयी है, हमारे घर पर मुसीबत छा गयी है.

इसे घर से बाहर फेंक दो. पर उसकी बात किसी ने नहीं सुनी. एक दिन उस घर में कोई बच्चा मर गया. बस फिर क्या था? बुढ़िया का गुस्सा हद से गुज़र गया. वह अपने आपको न रोक सकी. उसने टटोलते -टटोलते उस घडी को पा लिया और पहले तो उसे खूब कुचला और फिर उसे बाहर फेंक दिया.

जब किसी के घर में संत पधारते हैं या कोई दुनियादार उनकी सेवा में जाता है, अथवा किसी सत्संग में शामिल होता है, या उपदेश ले लेता है तो उसके घर वाले उसके पीछे लग जाते हैं और घर की हर मुसीबत और बला की ज़िम्मेदारी सत्संग या संत-महात्मा के मत्थे मढ़ देते हैं. कहते हैं कि जबसे इन महात्मा जी का आगमन हुआ है, इनका सत्संग किया है, मुसीबत ही मुसीबत आ रही हैं. कहने का मतलब यह है कि दुनियाँ ने संतों और उनके भक्तों और सेवकों को कभी चैन से नहीं रहने दिया है और न रहने देगी बल्कि हर रोज़ नई से नई व्याधि पैदा करेगी. सच्चे जिज्ञासु इसको अपने प्रीतम की मौज़ और उनका उपहार समझते हैं. इससे उस जिज्ञासु का कोई नुक़सान नहीं होता बल्कि जितना ज़्यादा दुनियाँ उनको तंग करती है उतनी ज़्यादा उसकी भक्ति बढ़ती जाती है और दुनिया से वैराग पैदा होता जाता है

यहां पर सच्चे और झूठे की परख होती है. जो मालिक के सच्चे भक्त हुए हैं उन्होंने दुनियाँ की तरफ से निरादर, अपमान और दुर्व्यवहार आदि सभी बातें सही हैं और सब कुछ सहन किया है. दुनियाँ के सामने उन्होंने एक आदर्श पेश किया है कि चाहे दुनियाँ वाले बदनामी करें या नेकनामी, चाहे कोई बुरा कहे या दुतकारे, हमें इसकी परवाह नहीं है. जिन्होंने भक्ति का रास्ता पकड़ा उन्होंने अपनी दुनियाँ उजाड़ कर रख दी. संसार और परमार्थ, लोक और परलोक, दोनों एक साथ नहीं मिल सकते. एक को दूसरे पर क़ुर्बान करना पड़ेगा. अगर परलोक चाहते हो तो दुनियाँ छोड़नी पड़ेगी. मगर दिखाबे के लिए तोड़-फोड़ नहीं करनी होती है. कभी ऐसे अवसर भी आवेंगे जब मालूम हो जावेगा कि भक्ति कहाँ तक पहुंची है. जिसमें भक्ति सच्ची और पक्की होगी वही प्रभु के दरबार में पहुंचेगा. ढोंगी और कपटी के लिए मालिक के दरबार में कोई जगह नहीं है.

कभी-कभी भक्ति और प्रेम का एक ज्वारभाटा सा आता है और उसमें साधक अपने को यह समझने लगता है कि मैंने सब कुछ पा लिया. मगर अक्सर ऐसी बाढ़ स्थिर नहीं रहती. एक भक्त ने ईश्वर प्रेम के आवेश में अपने पैरों में पत्थर मारने शुरू कर दिए. उसने कहा कि अगर मुझे ईश्वर नहीं मिलता तो मैं अपने पैरों को मार-मार कर कुचल डालूंगा. मगर उसकी यह भक्ति कच्ची थी. पैर भी कुचल गए और ईश्वर भी नहीं मिला. यह

ढोंग है. अगर थोड़े देर के लिए आँखों से आंसू बहने लगें, कुछ क्षणों के लिए बुद्धि तर्क-वितर्क करना छोड़ दे और मन शांत हो जाए तो क्या यह असली ईश्वर-प्रेम है? क्या इसमें स्थिरता आ गयी? सत्संग में आकर गुरु के चरणों में बैठने से, सत्संग के वातावरण से थोड़ी देर के लिए हरेक साधक पर ऐसी अस्थिर हालत गुज़रती है. मगर जहां घर पहुंचे और बच्चों ने लिपट कर मीठी-मीठी बातें कीं, या स्त्री ने कुछ कह सुन दिया, सारी भक्ति धुंआ हो जाती है. फिर लौट कर वहीँ आ जाते हैं जहां थे.

भक्ति का वेग आने से ही गुबार दूर नहीं होता. किसी तालाब में काई जमी है. हाथ से काई को हटा दो तो साफ़ पानी दिखेगा. लेकिन फिर आसपास से आकर काई उसको ढंक लेगी. इस तरह का वेग आना मन का ऊंचा भाव है. यह लक्षण तो अच्छा है पर स्थाई नहीं है. इस तरह के क्षणिक भाव से क्या ईश्वर मिल जायेगा? नहीं. इस भाव को कोशिश करके स्थाई बनाओ. हर समय वही हालत रहे. दुनियाँ की हर चीज़ में ईश्वर का रूप देखो. अपने हरेक काम को उस ईश्वर की सेवा समझ कर करो.

दुनियाँ में जब तक रहना है, यहां के कर्म तो करने ही पड़ेंगे. एक ही कर्म फँसाता है, वही कर्म निकालता भी है. यदि उस कर्म को करने में अपने को शामिल कर लोगो तो वह कर्म फँसायेगा और अगर उस कर्म को ईश्वर की सेवा समझ कर करोगे तो वही कर्म बंधन से छुड़ाएगा. मालिक की याद बराबर बनी रहेगी और प्रेम व भक्ति पक्की होती जाएगी. मन से सोचो और बुद्धि से विचार करो कि यह लड़का जिसे तुम अपना कहते हो वह किसका है? क्या वह तुम्हारे साथ आया था या तुम्हारे साथ जायेगा? यह मकान किसका है? क्या इसे तुम अपने साथ ले जाओगे?

इसी तरह दुनियाँ की हर चीज़ के बारे में सोचो तो देखोगे कि कोई तुम्हारा नहीं है. न तुम्हारे साथ आया था और न तुम्हारे साथ जायेगा. यहां की कोई चीज़ तुम्हारे काम नहीं आएगी. ये सब फंसाने वाली हैं. न मालूम तुम्हारी कितनी शादियां पिछले जन्मों में हुईं? कितने बेटे-बेटियां हुईं, कितने मकान बने, मगर अभी तृप्ति नहीं हुई? यह सब तो होता रहा है, आगे भी होता रहेगा. मनुष्य जन्म की क़ीमत समझो. इसी मनुष्य योनि में ही ईश्वर की प्राप्ति हो सकती है, दूसरी योनि में नहीं. इसलिए इस जन्म को अमूल्य जानकर इसका उपयोग ईश्वर प्राप्ति के लिए करो.

यह ज़िंदगी झूंठी ज़िंदगी है. आत्मा मलीन मन के पर्दों में दबी हुई है. जब वे परदे हट जाते हैं और आत्मा निखर जाती है, तभी असली ज़िंदगी शुरू होती है. जब किसी पर ईश्वर की कृपा होती है और ईश्वर उसे

अपनाना चाहता है तो उसके बंधन टूटने लगते हैं. सबसे पहले उसकी प्यारी से प्यारी चीज़ उससे छीनी जाती है. दुनियांदार इसे देखकर रोते हैं, संत खुश होते हैं कि हे प्रभु ! तू कितना अच्छा है. इसे लेकर तूने मेरा बंधन काट दिया. इस तरह हर कदम पर इम्तिहान होता है. वगैर इम्तिहान के कोई उसे प्राप्त नहीं कर सकता. क़ुरबानी करनी पड़ेगी. अगर उस ईश्वर को पाना चाहते हो तो दुनियाँ की चीज़ें तो क्या अपनी गर्दन तक काट कर देनी पड़ेगी.

जब तक तन नाहीं जरत, मन नाहीं मर जात !

तब लगि मूरत श्याम की, सपनेहुँ नाहिं लखात !!

यह दुनियां धोखा दे रही है. दिखाई कुछ दे रहा है, असलियत कुछ और है. जो असल है वह सिर्फ ईश्वर है, उसे पाने की कोशिश करो.

जब हमें किसी चीज़ से सुख मिलता है तब हम ईश्वर को बड़ा धन्यवाद देते हैं, और जब किसी चीज़ से दुःख मिलता है या मुसीबत आती है तो ईश्वर से दूर भाग खड़े होते हैं या उसे मज़बूरी में बर्दाश्त करते हैं, हम ईश्वर को धन्यवाद नहीं देते और न उसमें खुश होते हैं. यही कहते हैं कि ईश्वर को ऐसा ही मंज़ूर था. लेकिन यह मालिक की मर्ज़ी के साथ सहयोग करना नहीं है. हमारी आत्मा अभी निखरी नहीं है.

असल निखार तब होगा जब लड़का मरने पर भी वही ख़ुशी हो जो लड़का पैदा होने के वक्त लोग मनाते है . पूज्य महात्मा रामचंद्र जी महाराज कैंसर से पीड़ित थे. उन्हें बहुत तकलीफ थी लेकिन वे सदा प्रसन्न दिखाई पड़ते थे. किसी भक्त ने उनसे निवेदन किया कि आप इसे अच्छा करने के लिए ईश्वर से दुआ क्यों नहीं करते ? ईश्वर अपने प्यारे भक्तों को इतनी तक़लीफ़ क्यों देता है? उन्होंने कहा -"अगर तुम्हारा माशूक़ तुम्हारे मुंह पर प्यार से एक थप्पड़ लगा दे तो उसे तुम तक़लीफ़ समझोगे या उसकी एक अदा? तुम उससे खुश होंगे या नाराज़? इसी तरह तक़लीफ़ भी माशूक़ की एक अदा है. ईश्वर हमारा प्रियतम है और प्यार से उसने अगर हमें कोई मुसीबत भेज दी तो वह उसकी अदा है. हमें इसमें बड़ा आनंद आता है." मतलब यह है कि जब तक पूर्ण समर्पण नहीं हो जाता, ऐसी अवस्था नहीं आती. पर ऐसा करना निहायत मुश्किल है.

दुःख बर्दाश्त करने के चार रूप हैं :

(१) मज़बूरी से दुःख बर्दाशत करना . यह 'राज़ी-ब-रज़ा ' (यथा लाभ संतोष) नहीं है .

(२) दुःख को प्रभु की कृपा समझकर बर्दाशत करना.

(३) दुःख आवे तो उसे सराहे और सोचे कि हे प्रभु ! तेरी बड़ा कृपा है. न मालूम कितनी बड़ी मुसीबत थी जो तूने इतने थोड़े में ही काट दी. न मालूम सूली पर ही चढ़ना पड़ता जो सिर्फ कांटा ही चुभ कर रह गया.

(४) दुःख आवे तो यह सोचे कि वह मेरे मालिक की तरफ से एक तोहफा है, और उसमें खुश रहें. शेर शरीर की बोटी-बोटी नोच कर चबा रहा है और फिर भी आवाज़ निकल रही है ' शिवोहम, शिवोहम '. जो खा रहा है वह भी ईश्वर है और जिसे खा रहा है वह भी ईश्वर है. जलते हुए तवा पर बैठे हैं, सिर पर उबलता हुआ तेल डाला जा रहा है, दूर-दूर तक धुंआ और दुर्गन्ध उड़ रही है, फिर भी मुँह से निकल रहा है - ' वाहे गुरु, वाहे गुरु ' . यह है असली और पूर्ण समर्पण और सच्ची ' राज़ी-ब-रज़ा ' .

कोई चीज़ मुफ्त नहीं मिलती. क़ीमत देनी पड़ती है. जो चीज़ जितनी महंगी है उतनी ही ज़्यादा उसकी क़ीमत देनी होगी. अगर ईश्वर को चाहते हो तो जान की बाज़ी लगानी पड़ेगी. क़ीमत क्या है ? अपने अरमानों (इच्छाओं) का खून कर दो, इच्छा रहित हो जाओ और अपने आपको पूरी तरह समर्पण कर दो. इसका भेद संतों के सत्संग में मिलेगा.

जहां आपस में मौहबत्त से रह रहे हो वहीं सतयुग है. जहां एक दूसरे से कतराते हो,भेद-भाव है, वहीं कलियुग है. दैवी जीवन वहां है जहां सबके साथ प्रेम है, सहयोग है. परमात्मा जिस हाल में भी रखे उसी में शुकराना अदा करते रहो,और खुश रहो.

राम सन्देश : मई , १९९३.

प्रेम और प्रीति

प्रेम और प्रीति दो वस्तुएं हैं. प्रेम (इश्क़) हमेशा एक से होगा. परन्तु प्रीति, यानी मुहब्बत सबसे होगी. माशूक़ (प्रियतम) वह है जिससे इश्क़ करते हैं. उसी का हो जाना, अपनी तमाम ख़्वाहिशात उसी पर अर्पण कर देना, उसी के रूप को देखना, उससे प्रेम करना. ख़्वाहिश सिर्फ़ यह हो कि हम उससे मिल जायें. सच्चा आशिक़ वह है जो ख़ुद को उस पर न्योछावर कर दे और बदले में कुछ न चाहें. ऐसा प्रेमी हर दुःख और मुसीबत में अपने प्रियतम (प्रेम अंग वाले जिज्ञासुओं के लिए

सतगुरु) का भला चाहता है और कहता है - "आप खुश रहें ". तमोगुणी और रजोगुणी मन में प्रभु का दर्शन नहीं होता. असली गुरु (परमात्मा) का दर्शन , फिर अनामी का दर्शन, संत में ही होता है. यह भी सत्य है कि जब तक उसके दर्शन नहीं होते, पूर्ण प्रेम या इश्क़ पैदा नहीं होता. प्रेम के हृदय में जागने पर गुरु का स्थूल ध्यान जाता रहता है. संतमत में सिर्फ उसी एक परमेश्वर, वाहिद की पूजा होती है जो अनामी है, अरूपा है. उसके हुक्मों पर चलना ही एक-मात्र धर्म है. फ़क़ीर कुछ नहीं चाहता - न अर्थ, न धर्म, न काम, यहाँ तक कि निर्वाण की भी चाह नहीं रखता. उसकी एकमात्र चाह यही रहती है उस मालिक प्रभु की इच्छा पूर्ण हो. भक्त स्वयँ को भगवान का सेवक मानता है.

वेदान्तियों में प्रीति पूर्ण रूप से नहीं जागती. उनका यह कहना कि ' जगत मिथ्या और ब्रह्म सत्य है ' मन व बुद्धि से कभी जानने योग्य नहीं है. यह तो साधना की एक ऊंची अवस्था है, पर यहीँ अन्त हो, ऐसा नहीं है. जो कहने वाला है उसकी हस्ती को माना जाय तो यह भी मानना पड़ेगा कि जिसके बारे में वह कहता है उसकी भी हस्ती मौज़ूद है और दोनों के बीच का ज्ञान जो उसके क़यास (कल्पना) में आता है वह भी तो निमित्त रूप में मौज़ूद है. इसलिए यह साबित होता है कि ज्ञाता, ज्ञेय और ज्ञान तीनों ही मौज़ूद हैं. कबीर साहब कहते हैं : " एक कहूँ तो है नहीं, दूजा कहूं तो गार. जैसा का तैसा रहे, कहैं कबीर विचार." असल तो एक ही है जो सबका होते हुए भी, ख़ुद निराधार है, जो श्रष्टि के आदि में भी था और अन्त में भी रहेगा. उस मालिक, निराधार ईश्वर को तो सिर्फ वही जान पाता है जिस पर वह स्वयं अपने को प्रकट करता है. उसके दिव्य अलौकिक रूप को देखने के लिए दिव्य दृष्टि की आवश्यकता है. इन स्थूल आंखों में सामर्थ्य कहाँ जो उस दिव्य स्वरूप को देख सकें. जिस किसी पर भी उसने अपने आप को प्रकट किया उसे पहले दिव्य दृष्टि मिली, और तब उसका अनुभव हुआ.

ईश्वर प्राप्ती के साधन हैं- विवेक, वैराग्य, षट-संपत्ति और मुमुक्षुता. पहले इंद्रियों को विषयों से हटाओ, मन को वासनाओं से शुद्ध करो, बुद्धि तम और रज से निकल कर सत पर आ जाय और मन शान्त हो जाय तभी आत्मा का प्रकाश दीखेगा. बुद्धि जब तक निर्मल होकर आत्मा की तरफ़ नहीं पलटेगी, तब तक खुला ज्ञान नहीं मिलेगा. और बिना सत ज्ञान के न तो आत्मा का अनुभव होगा, न प्रेम जागेगा और न परमात्मा मिलेगा. परमार्थ कमाने के लिये तन, मन, धन सब कुछ लगाते रहें और यह देखते रहें कि मन उनमें अटकने न पावे. हर समय अपनी निरख-परख करते रहो. मन का घाट जब तक न बदलेगा परमार्थी चाल दुरुस्ती से नहीं बनेगी. गढ़त के लिए मौज के साथ मुआफ़िक़त करो. जो भी दुःख तक़लीफ़ आवे उन्हें धीरज के साथ, उत्साह और उमंग के साथ बर्दाशत करो. तभी बन्धन ढीला होगा. मालिक की दया की यहीं पहिचान है कि उल्टी-सुल्टी हालतें आवें, और इनके आने पर मालिक का शुक्रगुज़ार हों. कभी टालने की कोशिश मत करो. अगर बर्दाश्त के बाहर जान पड़े तो उसके सामने रोओ, गिड़गिड़ाओ और बर्दाश्त करने की शक्ति मांगों. उसके हर काम हमारी भलाई के लिए होते हैं. वह वाक़ई बड़ा दयालु है. निराश न हो. दिल में चाह और दर्द पैदा करो. वह कब तुमसे दूर है? वह तो हर समय तुम्हें पुकार रहा है. ज़रा एक बार उसकी तरफ़ मुख़ातिब होकर तो देखो. कर्म, भाग्य, प्रारब्ध सब फंसाने वाले हैं और फुज़्ला (विष्टा) हैं .

राम संदेश मई , १९७१

भक्ति के अनेक रूप

दुनियाँ में अनेक धर्म और मज़हब हैं और उनमें पूजा आदि के जो अलग - अलग तरीक़े हैं उन सबका मतलब यही है कि किसी तरह ईश्वर के चरणों में प्रेम हो जाय. बिना प्रेम के ईश्वर प्राप्ती नहीं हो सकती. ईश्वरीय प्रेम का बयान ज़बान से नहीं किया जा सकता, ख़्यालों में आदमी कितना ही ऊँचा उठ जाय पर उस मोहब्बत का जो ईश्वर के लिए होतीं है, वार पार नहीं पा सकता -- उसका कोई अन्त नहीं है --उसकी पूर्णता कहाँ है, इसका पता नहीं. लेकिन हिन्दू धर्म में ईश्वर -प्रेमीयों ने उसे बयान करने की कोशिश की है और उसके लिये संसारी प्रेम की उपमा का सहारा लिया है. जो चीज़ें ईश्वरीय हैं उनको मनुष्य ने अपने तौर पर समझने की कोशिश की है. इस ईश्वर प्रेम को उन्होंने ' भक्ति ' नाम दिया है.

सबसे नीचे दर्जे की भक्ति को ' शाँत' भाव कहा गया है. भक्त ईश्वर की उपासना तो करता है लेकिन प्रेम की आग उसके हृदय में नहीं धधकती, ईश्वर के लिये पागलपन और उन्मत्ता उसके मन में नहीं आती. इस तरह का प्रेम घटिया है, ठंडा है, धीमा है, उसमें गरमी और जोश नहीं है. वह शाँत है. रस्मी तौर पर ख़ाली पूजा कर लेना, फूल चढ़ा देना, दर्शन कर आना, पाठ कर लेना या ऐसी ही और ऊपरी बातों से ज़रूर यह शाँत भाव ऊँचा है, लेकिन तेज़ी न होने से इस निचले दर्ज़े के प्रेम को शाँत भाव कहा गया है. शाँत भक्त सीधा और चुपचाप रहने वाला होता है.

इससे कुछ ऊँचा और अगला दर्ज़ा प्रेम का 'दास्य ' भाव कहलाता है. यह भाव जब आता है तब भक्त अपने को सेवक और ईश्वर को अपना मालिक समझता है. उसके कर्म ईश्वर के प्रति ऐसे ही होते हैं जैसे एक वफ़ादार नौकर अपने मालिक के लिये करता है. उसकी सारी ज़िन्दगी अपने मालिक के लिये होती है. मगर यह भी घटिया भक्ति है, जैसा काम वैसा दाम. नौकर की पहुँच मालिक के घर के अन्दर तक है लेकिन वह उससे मिलकर एक नहीँ हो सकता. दो का ख़्याल हमेशा रहेगा. " तू मालिक है, मैं तेरा दास हूँ ." आधीनता तो पूर्ण होती है - जैसा देगा वैसा खाऊँग, जैसा देगा वैसा पहनूँगा, जिस नाम से पुकारेगा वही मेरा नाम है - ऐसा भाव दास का मालिक की तरफ़ होता है. इससे मालिक खुश होता है और क़भी - कभी खुश होकर अपने नज़दीक बिठा लेता है. इससे ज़्यादा और कुछ नहीं. नज़दीक़ी हाँसिल हो गई मगर मिलकर एक नहीं हुए. नौकर का मालिक के ऊपर कोई ज़ोर नहीं होता. हनुमान जी का दास भाव था.

तीसरा दर्जा प्रेम का ' सख्य ' भाव कहलाता है. सखा मायने दोस्त. "Thou art my beloved friend" सख्य भाव में भक्त भगवान को अपने बराबर का, हमदर्द, हमराज़ और हमनशीं समझता है. ग़रीबी, अमीरी का कोई ख़्याल नहीँ, जैसे कृष्ण और सुदामा का भाव. भक्त अपने ईश्वर को जब सख्य भाव से पूजता है तब उसे अपने नज़दीक समझता है. अपने जीवन की अच्छी-बुरी, दुःख - सुःख की, पोशीदा से पोशीदा सब भेद खुल कर कह देता है और उससे पूरी उम्मीद ही नहीं बल्कि ज़ोर के साथ उसका भरोसा करता है कि वह उसकी हिफाज़त करेगा, उसकी हमेशा मदद करेगा. वह ईश्वर को ऐसा समझता है जैसे बचपन के खेलने वाले साथी - ग्वाले और कृष्ण.

जो ऊपर चढ़ता है वह नीचे गिरता है, जो नीचे गिरता है, वह ऊपर भी चढ़ता है -- यह उसूल है. जब इन्सानी आत्माऊपर चढ़ सकती है तो वह नीचे भी गिर सकती है. इसलिए आदमी को चाहिये कि अपनी ख़्वाहिशात को धर्म का सहारा लेकर पूरी करे लेकिन उसमें पूँजी, जो उसके पास निश्चित मात्रा में हैं, कम से कम लगाए और जो पूँजी छिपी हुई है, यानी जो शक्ति आत्मा की छिपी हुई है, उसको अभ्यास करके हासिल करे और इस पूँजी की मदद से, यानी अभ्यास और सतसंग करके, ऊपर की चढ़ाई करे ताकि उससे नज़दीक़ी हासिल हो सके. जब तक ईश्वरीय गुण हासिल नहीं होते, उसको क़ुरबत (समीप्य) नसीब नहीं होगा और जब तक क़ुरबत नसीब नहीं होती, आत्मा को चैन नहीं मिल सकता. इसलिए दुनिया के सब काम करते हुए, किसी न किसी तरीके से (जिसको मन पसन्द करता हो) उस ईश्वर को याद बराबर करते रहना चाहिये. यही सिर्फ एक ज़रिया है जिससे जीव हमेशा - हमेशा का सच्चा और अपार सुःख हासिल कर सकता हैं जो हमारा असली परमार्थ है. यहीं उस परम पिता परमात्मा के दुनियाँ की रचना करने का मतलब है.

ईश्वर सबको ज्ञान दें.

राम संदेश : सितम्बर , १९६२.

भेंट

भेंट तीन प्रकार की होती हैं -- रुपए -पैसे यानी धन दौलत की, मन की और आत्मा की. रुपए -पैसे की भेंट सबसे नीची समझी जाती है. गुरु को रुपया पैसा और धन दौलत इसलिए भेंट नहीं की जाती कि वह इनका भूंखा है. आपके धन की उसको ज़रूरत नहीं है. भेंट वह इसलिए लेता है कि उससे आपका उपकार हो और आपका पैसा जहां लगे उससे औरों का भला हो. दुनियाँ के और पदार्थ जहां बन्धन हैं वहाँ रुपया पैसा भी एक बन्धन है और बन्धन टूटने ही चाहिये. यह दुनियाँ में फ़साने वाला है. इसे किसी शुभ कार्य में लगाना, ईश्वर की भेंट है. इस भावना से इसे गुरु अर्पण किया जाता है. इसके साथ - साथ बन्धन ढीला होता है. भैंट देने वाला तो देकर हलका हो जाता है मगर लेने वाले पर इसका बोझ पड़ता है. वह या तो इसका मुआवज़ा दे (दुआ से या और किसी तरह) या अपने शुभ कर्मों में से हिस्सा बांटे. अगर वह ऐसा नहीं करेगा तो उसकी गिरावट होगी.

भेंट देने से गुरु चरणों में श्रद्धा बढ़ती है, मन शुद्ध होता है और ईश्वर प्रेम बढ़ता है. मन का शुद्ध होना ज़रूरी है. क्योंकि जब तक मन साफ न होगा आत्मा के ऊपर से आवरण दूर नहीं होंगें और ईश्वर का प्रेम नहीं मिलेगा. मन का शुद्ध होना यही है कि आत्मा का प्रेम जागे. ईश्वर का प्रेम आत्मा में क़ुदरती है, लेकिन मन की वासनाएं, इंद्रिय भोग की ख़्वाहिश, बुद्धि की चतुराई, अपनी खुदी - यहीं मन के चारों परदे उसको ढंके रहते हैं. बजाय ईश्वर प्रेम के दुनियावी चीज़ों से प्रेम हो जाता है. जब अभ्यास, वैराग और सत्संग से यह ख़्वाहिशात शान्त हो जातीं हैं तो यहीं मन के परदों का हटना है. इनके हटने पर जो ईश्वरीय प्रेम क़ुदरती छिपा हुआ था आहिस्ता - आहिस्ता उभरने लगता है .

रुपये के मुक़ाबले में मन की भैंट ज़्यादा अच्छी है. गुरु जो कहे उस पर यक़ीन करना, अपने ख़्याल को उसके साथ शामिल कर देना और उसके कहे हुए को उसी शक़्ल में क़बूल कर लेना मन की भैंट है. इसके दो रूप हैं - एक मज़बूरी में क़बूल करना और दूसरे ख़ुशी से क़बूल करना . ख़ुशी यह है कि फलां काम गुरु का है, उसको लगन से, चाव से करना चाहिये. इसका नतीज़ा यह होता है कि मन का रूप बदल जाता है. उसके ख़्याल को ख़ुशी से क़बूल करना - यहीं मन को तोड़ देना है. जिसने मन को तोड़ दिया वही क़ामयाब है.

आपमें ख़्वाहिशात जन्म -जन्मांतर से दुनियाँ की थीं. उन्हें पूरा करने के लिए मालिक ने आपको दुनियाँ में भेजा. आपकी आत्मा ने मनुष्य शरीर धारण किया, उसके ऊपर ख़्वाहिशात का परदा था. ईश्वर की शक्ति से ही काल ने इस दुनियाँ को रचा. ईश्वर ने जीव को भेजा ताकि होश में आ जावे. यह दुनिया को भोग कर उसका रस लेकर ख़्वाहिशात को भोग कर उपराम हो जायें और अपने धाम वापस चले जायें जो उसका असली ध्येय है.

किसी न किसी तरकीब से उनमैं जागृति आ जावे .लेकिन जीव यहां आकर रस लेते -लेते फँस गये, ख़्वाहिशात दुनिया के रस और आनंद की और बढ़ने लगीं, आत्मा पर ग़िलाफ़ बजाय कम होने के और चढ़ते गये और जीव जो पहले से बन्धन में जकड़े हुए थे और ज़्यादा बन्धन में जकड़े जाने लगे. दुनियाँ की यह हालत देख कर जीवों के उद्धार के लिए संत प्रकट हुए. उन्होंने दुनियाँ को उजाड़ा नहीं, क़ायम रखा, क्योंकि दुनियाँ उजाड़ कर तो असल मक़सद पूरा नहीं हो सकता. संत जीव को दुनियाँ की ख़्वाहिशात से उपराम करा कर और दुनिया से वैराग्य और ईश्वर से अनुराग कराकर अपने धाम को वापस ले जाते हैं. अवतारों और संतों में भेद है, अवतार जितने भी आये सब काल देश से आए. काल कभी भी यह नहीं चाहता कि दुनियाँ उजड़ जाय. लिहाज़ा जब - जब दुनियाँ में बुराई और अधर्म बढ़ा अवतारों ने आकर balance (संतुलन) क़ायम किया. बुराइयों को रोका और भलाई को बढ़ावा दिया ताकि दुनियाँ क़ायम रहे. इस तरह रचना को क़ायम रखने के लिए अवतार आते हैं. संत तलवार से काम नहीं लेते, प्रेम से काम लेते हैं, अधर्मी लोगों का नाश नहीं करते बल्कि अधर्म का नाश करके परमार्थ पथ पर चलना सिखाते हैं.

ईश्वर के तीन रूप मानते हैं. ब्रह्मा पैदा करने वाले, विष्णु पालन -पोषण करने वाले और शिव संहार करने वाले. ये तीनों देवता श्रष्टि को क़ायम रखते हैं और जब - जब ख़राबी होतीं है तो विष्णु का अवतार आकर उस ख़राबी को दूर करके ठीक करता है. लेकिन ईश्वर का चौथा रूप भी मानते हैं जो संत या गुरु है जो दुनियाँ से छुड़ाने के लिये आते हैं. जब जीव इस आवागमन से तंग आ जाता है और इससे छुटकारा पाने की ख्वाहिशमंद होता है तो ईश्वर का चौथा रूप (संत रूप) इन्सानी शक़्ल इख्त्यार करता है और जो लोग (अधिकारी) जीवनमुक्त होना चाहते हैं उनको अपनी सोहबत से फ़ैज़याब कराकर अपने धाम यानी दयाल देश को वापस ले जाते हैं जहां जाकर फिर वापिस नहीं आता. इस तरह जीव हमेशा के लिये आवागमन से छूट जाता है. बाकी और जीवों पर जो उसकी सोहबत में आते हैं उन पर भी उसका असर पड़ता है और वे भी आगे चलकर अधिकारी जीवों की श्रेणी में आ जाते हैँ.

यह दुनियाँ काल की रचना है. यहाँ पर जो क़र्ज़ लिया है वह चुकाना होगा यानी जो कर्म किए हैं, अच्छे या बुरे, उनका एवज़ मिलेगा. मन दुनियाँ में लगा है, आत्मा अपने देश को जाना चाहती है. मन का रुख नीचे की तरफ़ है और आत्मा का ऊपर की तरफ़, दोंनों में जद्दोजहद होतीं है. जब मौत आती है जान हाथ पैरों से खींच करके ऊपर को सिमटती है. इन्द्रिय और गुदा से जब निकल जाती है तो पेशाब पखाना छूट जाता है. हृदय से निकलने पर दिल की धड़कन बंद हो जाती है, नब्ज़ छूट जाती है. गला घड़घड़ाने लगता है, वहाँ से निकलने पर आँखों की ज्योति जाती रहती है. इसके बाद भोंहों के बीच के हिस्से से ऊपर चढ़ती है वहां एक पतली सी

नली है जिसे बंकनाल कहते हैं. जब इसमेँ होकर गुज़रती है तो बड़ी तक़लीफ़ होतीं है. आत्मा ऊपर को खींचती हैं और मन की जो गांठ उसके साथ बंधी होती है वह उसमें से नहीं निकल पाती, टुकड़े -टुकड़े हो जाती है. आदमी हाथ पाँव छटपटाता है, कुछ बोल नहीं पाता. इस मुक़ाम पर बहुत अंधकार होता है. अब जो दुनियाँ में फंसे हैं उनको लेने के लिए यमदूत आते हैं और दूसरों को संत. संत जब आते हैं , बात - चीत करते करते जाते हैं, उन्हें तक़लीफ़ नहीं होती . लगता है जैसे सो रहे हों. जिस रास्ते मौत होती है उस रास्ते संत रोज़ गुज़रते हैं, रोज़ मरते जीते हैं. अभ्यासियों ने अनुभव किया होगा कि जब सुरत ऊपर को चढ़ती है तो जिस्म का नीचे का हिस्सा सुन्न हो जाता है. मतलब यह है कि आत्मा वहाँ से खिंच कर ऊपर चढ़ जाती है. दुनियाँ बनती है मन की शक्ति से, परमार्थ मिलता है काल का कर्ज़ा देने से.

हम यहां पर अपनी ख़्वाहिशात की पूर्ति के लिए और उससे उपराम होकर अपने धाम को वापस जाने के लिए आए हैं, यानी हमारे दो आदर्श हैं - पहला यह है कि अपनी ख़्वाहिशात को ज्ञान से खतम करो या भोग कर खतम करो. यहीं काल का क़र्ज़ अदा करना है. उनसे वैराग होने पर ईश्वर प्रेम पैदा होगा और उससे अनुराग पैदा होगा. यही ईश्वर प्राप्ति है. दुनियाँ को हांसिल करो और फिर उसको छोड़ो और ईश्वर प्रेम हासिल करो और उसमें अपने आप को लय कर दो. दुनियाँ को हासिल करना बहुत मुश्किल काम है, और यही दीन और दुनियाँ का बनना है. जो दुनियाँ को हासिल नहीं कर सकता वह दीन को क्या हासिल कर सकता है यानी जिस चीज़ को हांसिल नही किया है, वह छोड़ेगा क्या ?

दुनियाँ के जंजाल, मन के विकार सब शैतान का पसारा हैं. जब तक शैतान से नहीं लड़ोगे कामयाब नहीं होंगे. कामयाब होने पर सच्चा सुःख, हमेशा क़ायम रहने वाला सुःख, ऐसा सुःख जिसके बाद किसी और सुःख की तुम्हें इच्छा नहीं होगी, हासिल हो जायेगा. यहीं लक्ष्य हैं. लेकिन यह एक जन्म का काम नहीं है. कुब्बते इरादी (इच्छा शक्ति) मज़बूत करो. दुनिया की चीजों को देखो, भोगो और छोड़ो, उनसे उपराम हो जाओ. पहले वैराग फिर अनुराग. जब परमात्मा से सच्चा अनुराग होता है और उसका सच्चा प्रेम हासिल हो जाता है , यहीं मोक्ष है. सच्चा प्रेमी मोक्ष नहीं चाहता. इसका साधन यह है की तुम परमात्मा के अंश हो और उसका प्रेम तुम्हारे अन्दर है लेकिन तुमने उसे बाहरी चीज़ों में फैला रखा है, उसे बटोरो . मन की ख़्वाहिशात को ख़तम करो, उसे सब तरफ़ से हटा कर एक ख़्वाहिश पर लाओ, कौन सी ख़्वाहिश - परमार्थ की ख़्वाहिश .

इस काम में हर दम परमात्मा की मदद चाहो. उसकी कृपा से तक़लीफ़ें आती हैं. तक़लीफ़ों की शक्ल में जो उसकी कृपा होती है वह बंधन छुड़ाने के लिए होती है. इसलिए फ़क़ीर को तक़लीफ़ें ज़्यादा होतीं हैं. वह तक़लीफ़ चाहता है कि संस्कार ज़ल्दी कटें. असली चीज़ परमात्मा का प्रेम है. सब कोशिशें उसी को हासिल करने

के लिए होती हैं. वह तब मिलेगा जब सब संस्कार कट जाएँगे. यह मन की भेँट है. इसे जब तक गुरु को नहीं दे दोगे मन आसानी से साफ नहीं होगा. इसी को समर्पण या surrender कहते हैं. रूपये पैसे की भेंट बहुत से लोग कर लेते हैं, मन की भेंट उनसे कुछ कम लोग कर पाते हैं लेकिन आत्मा की भेँट कोई बिरला ही कर पाता हैं. जिसने सब कुछ समर्पण कर दिया उसने सब कुछ पा लिया.

" मैँ तू हुआ, तू मैँ हुआ. मैँ तन हुआ, तू जान हुआ . ऐसी एकता हो गई कि इसके बाद कोई नहीं कह सकता कि मैँ और हूँ , तू और है ". यह आत्मा की भेँट है. यह ज़बानी नहीं होतीं. जिस रोज़ यह दे दी, उसी रोज़ मुराद पूरी हो गई. मोक्ष हो गयी. यह बात भगवान कृष्ण ने अर्जुन को गीता के आख़ीर में बताई हैं जो सारी गीता का निचोड़ है, उपसंहार है : " हे अर्जुन ! अब अन्त की बात और सुन जो सब से गुह्य है. तू मुझे अत्यन्त प्यारा है, इसीलिए मैँ तेरे हित की बात कहता हूँ. मुझमें अपना मन रख, मेरा भक्त हो, मेरी पूजा कर और मेरी वंदना कर . मैं तुझसे सत्य प्रतिज्ञा करके कहता हूँ कि तू मुझमें आ मिलेगा क्योंकि तू मेरा प्यारा भक्त है . सब धर्मों को छोड़कर तू केवल मेरी ही शरण में आ जा . मैं तुझे सब पापों से मुक्त कर दूँगा . डर मत. "

किसी चीज़ की नापसंदगी या नफरत के ख़्याल से उसे छोड़ देना भेँट नहीं हैं. भेँट सबसे प्यारी चीज़ की दीं जाती है जिससे मोह हो, लगाव हो और जो दुनिया में फसाने वाली हो. कहने का मतलब यह है कि जो चीज़ तुम्हें सबसे प्यारी हो, उसे ईश्वर की राह में क़ुर्बान कर दो. संध्या में बैठो तो देखो कि किस चीज़ का ख़्याल आता है. जिस चीज़ का ख़्याल आए समझो कि वही रुकावट है. संध्या के वक्त जो ख़्याल आते हैं, आत्मा का प्रकाश पाकर वह स्थूल रूप धारण कर लेते हैं. संध्या में ज़िस्म का ग़िलाफ़ उतर जाता है, मन काम करता रहता है. अगर मन का परदा टूट जाय तो ख़्याल में इतनी शक्ति आ जाती है कि आदमी भी ब्रह्मांड की रचना कर सकता है. आत्मा और परमात्मा के बीच की चीज़ मन है, वह हट जाये तो आत्मा वही असल है जो परमात्मा है.

जो ख्वाबात (स्वप्न) आयें उन पर ध्यान रखो. ख़्वाब मन का रूप दिखता हैं. जो चीजें तुम्हें फसाये हुई हैं उन्हें ख़्याली तौर पर क़ुर्बान करो. ख़्याली तौर पर उन्हें परमात्मा के चरणों में रख दो - हे मालिक यह तेरी हैं, हमारा मोह का परदा दूर कर, हमेँ सच्ची रोशनी दिखा ." जब जब हम फंसे, हमने गुरुदेव से प्रार्थना की और उन्होंने हमेशा सहायता करने के साथ - साथ हमारी हिम्मत बढ़ायी. उन्होंने हमेशा आगे बढ़ने की ताक़ीद की. मेरा तो यह तज़र्बा है कि जो आदत मैंने उनसे छिपाई वह रुक गई और जो उनके आगे रख दी वह जाती रही. यह समर्पण है .

गुरुदेव सबका कल्याण करें .

राम संदेश फरवरी १९६४

मन और माया से आत्मा को आज़ाद करो

हर एक मज़हब में मोक्ष प्राप्त करने का अलग -अलग तरीक़ा है. हर एक आचार्य ने वक़्त और ज़माने के लिहाज़ से जन-साधारण की सुविधा को देखते हुए मोक्ष के तरीके को सहल बनाया है. इस कलियुग में परमात्मा का नाम ही मोक्ष का ज़रिया है. इससे सहल कोई उपाय नहीं है. पुराने ज़माने में प्राणायाम और हठयोग को लेकर चलते थे लेकिन अब इससे काम नहीं चलता. न तो अब इसके जानने वाले रहे और न अब लोगों की तंदुरुस्तियां, वक़्त की कमी और आजकल की ख़ुराक ही प्राणायाम साधने के योग्य है. ऐसे लोग अब भी देखे गये हैं जो कहते हैं कि वे तीन-तीन घंटे प्राणायाम करते हैं लेकिन मन नहीं सधता. संत-मत में मन को क़ाबू में करना सबसे ज़रूरी बात है. इसलिए इस मत के अभ्यासियों को प्राणायाम की ज़रूरत नहीं है. हाँ, गृहस्थ आश्रम में तंदुरुस्ती क़ायम रखने के लिये और वायु साधने के लिए भले ही कोई प्राणायाम कर ले लेकिन किसी जानकार से सीखकर करना चाहिये वरना नुक़सान हो जायेगा.

हमारे ज़िस्म के अन्दर कई layers(आवरण, परदे) हैं उनमें सबसे भीतर परमात्मा बैठा है. संत उसको बाहर नहीं तलाश करते बल्कि अपने अन्दर देखते हैं. इस काम में दो बातें ज़रूरी हैं. पहली यह कि रास्ता जानना चाहिये और दूसरी यह कि ऐसा guide (पथ प्रदर्शक) चाहिये कि जो ख़ुद रास्ता चल चुका हो, उससे अच्छी तरह वाक़िफ़ हो और जिसमें दूसरे को रास्ता बताने की योग्यता हो और वह तुम्हारा हमदर्द भी हो. इसके अलावा जिज्ञासु में पक्का इरादा रास्ता चलने का हो और रास्ता बताने वाले में उसकी पूरी श्रद्धा और विश्वास हो, तब रास्ता चला जा सकता है. रास्ता जानने वाले की पहरेदारों से जान पहिचान हो तभी वे अन्दर जाने देंगे वरना पीछे ढ़केल देंगे. कहने का मतलब यह है कि guide (पथ प्रदर्शक गुरु) ऐसा हो जो परमार्थ के रास्ते की सब कठिनाइयों को जानता हो और पन्थाई को उनमें से होकर निकाल ले जाने की पूरी योग्यता हो. वैसे तो रास्ते में बहुत सी रुकावटें और परदे हैं लेकिन ख़ास - ख़ास परदे सात हैं, सातवें आसमान के ऊपर परमात्मा बैठा है.

(1) अन्नमय कोष - जो मनुष्य का स्थूल शरीर है वह पंच -महाभूतों (तत्वों) से बना है. यह पहली रुकावट है. जब मनुष्य इंद्रियों द्वारा कोई आनन्द लेता है तो उसे उस आनन्द की याद बनी रहती है. जब–जब उस आनन्द की याद आती है तो फिर उसी आनन्द में फँस जाता है. नाक गंध का स्वाद लेती है. जिव्हा खाने का स्वाद लेती है, कान मीठी ध्वनि या गाने का स्वाद लेते हैं, वगैरह- वगैरह. ये सब मनुष्य की सुरत को बहिर्मुखी बनाते हैं और दुनियाँ में फंसाते हैं .

(2) प्राणमय कोष - मनुष्य के शरीर में जो हवा सांस के जरिए आती-जाती है और जिससे वह ज़िन्दा है वही दूसरा परदा है. अभ्यास में जब मनुष्य का ध्यान स्थूल शरीर से हट कर ऊपर को चढ़ता है तो वह इस दूसरे परदे पर आ जाता है. इसी सांस को साधने के लिए प्राणायाम किया जाता है जिससे नर्वस (स्नायु, नाज़ुक़ नाड़ियां) पाचन क्रिया, शरीर में रक्त का प्रवाह आदि बातें ठीक रखती हैं. सन्त-मत में प्राणायाम का अभ्यास नहीं कराया जाता क्योंकि यह बातें ऊँचा अभ्यास करने से स्वयँ सध जाती हैं.

(3) मनोमय कोष - तीसरा पर्दा मन का है जिसका विस्तार बहुत बड़ा है. मन में बेशुमार विकार और वासनायें भरी पड़ी हैं. मन उन्हीं का गुनावन उठाया करता है. ज़्यादातर अभ्यासी यहीं अटके रहते हैं. बिना गुरु की मदद के मन से निकलना नामुमकिन है .

(4) विज्ञानमय कोष :- चौथा पर्दा बुद्धि का हैं जो बहुत सूक्ष्म है. बुद्धि अपने ख़्याल उठाती रहती है. अधिकतर विद्वान और ऊँचे अभ्यासी इसी जगह ठोकर खाते हैं. उन्हें अपनी विद्या, बुद्धि, चतुराई आदि का गर्व हो जाता है और उसी में फंस कर रह जाते हैं. अभ्यासी की बुद्धि शंकाएँ पैदा कर लेती है. वह एक विषय पर क़ायम नहीं रहने देती.

(5) आनन्दमय कोष - पांचवा पर्दा आनन्द का है. जब मन सधने लगता है तब जो आनन्द आने लगता है उससे अभ्यासी यह समझते हैं कि हम सब कुछ हो गये लेकिन यह आनन्द स्थायी नहीं है. जब चिराग़ की रोशनी किसी object (वस्तु) पर पड़ती है तब वह चीज़ दिखाई देने लगतीं है. इसी तरह जब आत्मा का प्रकाश जब माया पर पड़ता है तब आनन्द मालूम होता है लेकिन यह आनन्द आत्मा का ख़ालिस आनन्द नहीं है. आत्मा के आनन्द में एक तरह का ऐसा सरूर होता है जो अपने आप पर आधारित होता है और जा बयान नहीं किया जा सकता .

(6) तुरिया अवस्था - यह आत्मा का स्थान है. यहाँ अभ्यासी की स्थिति आत्मा में हो जाती है. यहाँ अभ्यासी 'अहं ब्रह्मास्मि ' कहने लगता है

(7) तुरियातीत अवस्था- सातवां स्थान ईश्वर का है. इस स्थान पर अभ्यासी की अवस्था तुरियातीत की हो जाती है.

संत मत में ईश्वर को जानने का बहुत आसान तरीक़ा है. मनुष्य का ज़िस्म दो चीज़ों से मिलकर बना है, एक मन और माया, दूसरी आत्मा. मन की तीन हालतें हैं. सबसे निचली हालत तमोगुण की है जिसमें हैवानी ख़वास (पाशविक वृत्तियाँ) रहती हैं. मन की दूसरी हालत रजोगुण की है जो बीच की अवस्था है. इस हालत में मन एक ख़्याल पर नहीं रह सकता. उसके विचार बराबर बदलते रहते हैं. कभी वह अच्छाई की तरफ़ जाता है, कभी बुराई की तरफ़. मन की तीसरी हालत सतोगुण की हैं जो पहली दो हालतों के बनिस्बत ज़्यादा stable (परिपक्व)है. इसमें मन अच्छे-अच्छे विचार उठाया करता है. अभ्यासी के सब काम सतोगुणी मन की अवस्था पर आकर नेकी और भलाई के होने लगते हैं. लेकिन जब तक भलाई का ख़्याल सामने है तब तक बुराई का ख़्याल छिपे तौर पर मौज़ूद है. इसलिए यहाँ से भी गिरावट का डर रहता है. यह दुनियाँ कालदेश है. मन और माया काल के ही आधीन हैं और जहाँ काल का राज्य है वहां की सब चीज़ें नाशवान हैं. एक solar system (सौर मण्डल) का मालिक ईश्वर है और जो सब सौर मण्डलों का मालिक है वह परमेश्वर है जो हजारों ईश्वरों पर हुक़ूमत कर रहा है.उसी को सन्तों में सतपुरुष दयाल और सूफ़ियों में मालिके-कुल कहते हैं. जितने सितारे आप देखते हैं ये सब सूर्य हैं और उनका एक-एक मण्डल है और हर एक मण्डल में दुनियाँ आबाद है. ऐसे- ऐसे अनगिनत सौर मण्डल हैं. न मालुम अब तक कितने राम और कृष्ण के अवतार इन सौर मण्डलों में हो चुके हैं. अगर इन बातों का अन्दाज़ लगाने बैठें तो आदमी की अकल हैरान रह जाय.

मनुष्य की आत्मा अज्ञान में पड़ी थी और उसके ऊपर ख़्वाहिशात के पर्दे पड़े हुए थे. ईश्वर की कृपा हुई और उसने उसे इस दुनियाँ में भेज दिया कि ख़्वाहिशात को भोग कर सब परदे दूर हो जायें और आत्मा स्वयं प्रकाशित हो जाये. लेकिन हुआ इसका उलटा. बजाय परदे दूर करने के मनुष्य इस दुनियाँ की चीज़ों में आनन्द लेने लगा और बजाय आज़ाद होने के और उलझ गया.

इस दुनियाँ में मन का राज्य है. मन आत्मा से शक्ति लेकर उसी पर हुकूमत करता है. मन हमेशा बदलता रहता है और उसके प्रभाव में आकर हम भी बदलते रहते हैं. जब कोई वस्तु मिलती है तब सुःख होता है और जब छिन जाती है तब दुःख होता है. यह दुःख-सुःख लगातार चलता है. इस दुनियाँ का आख़िरी अंजाम जुदाई हैं. जहां यह हालत है, वहाँ असली सुःख कैसा? संतों के देश यानी दयाल देश में आत्मा ही आत्मा है. वहां आत्मा ही आत्मा, प्रेम ही प्रेम, आनंद ही आनंद है. तुम उसी देश के वासी हो लेकिन अज्ञान के कारण अपने घर से दूर पड़े हो. अज्ञान अभी बना हुआ है, उसे दूर करो. तुमने इस दुनियाँ में आकर अपने देश को भुला दिया है और यहां की वस्तुओं से मोह पैदा कर लिया है. तुम कहते हो 'यह मेरा है '. यहां कोई किसी का नहीं है. अगर

तुम्हारा है तो तुम्हारे मन के अनुसार चलेगा. लेकिन नहीं, वह अपने मन के अनुसार चलता है क्योंकि मन सबका अलग-अलग है. वह कभी आपके अनुसार नहीं चलेगा. इस दुनियाँ की एक ख़ास बात यह है कि दो चीज़ें कभी एक सी नहीं होतीं. कुछ न कुछ फ़र्क अवश्य होता है. अगर फर्क न हो तो दो एक सी चीज़ें एक हो जायेंगी.

आत्मा पर से ख़्वाहिशात के परदे हटा दो. अपना रूप देखो, तुम्हारा रूप क्या है? तुम ईश्वर के हो, ईश्वर तुम्हारा है. इस दुनियाँ में कोई तुम्हारा नहीं है. यहाँ की चीज़ों को एक-एक करके तज़ुर्बा करके छोड़ दो. ये तो तुम्हें तज़ुर्बा करने के लिये मिली थीं. भ्रम से तुम इन्हें अपनी समझ बैठे. अगर गुरु के कहने में चलोगे तो यहां की चीज़ों का तजुर्बा भी होता चलेगा और उन्हें छोड़ते भी चलोगे. अगर बराबर गुरु के कहने में चलते रहोगे तो एक न एक दिन तुम्हें असली तज़ुर्बा यांनी आत्म-बोध हो जायेगा. पहले गुरु के कहने पर विश्वास करो, उनमें श्रद्धा लाओ, उनका सत्संग करो और उनके कहने पर चलो . जो ऐसा करता है उसको आसानी से आत्म-बोध हो जाता है. जो तर्क-वादी होते हैं उन्हें कठिनाई होती है. विश्वास से रास्ता ज़ल्दी तय होता है .

अनुराग और वैराग्य दोंनों एक हैं. किसी चीज़ को अच्छा समझ कर क़बूल करना अनुराग और किसी चीज़ को बुरा समझ कर उसे छोड़ना वैराग्य है. जो वस्तु ईश्वर की तरफ़ ले जाती है उसे पकड़ो, वही अनुराग है और जो वस्तु ईश्वर से छुड़ाती है उसे छोड़ते चलो, यही वैराग्य है. दोनों का लक्ष्य एक है. आपके यहां गुरु को प्यार करते हैं और जो चीज़ उसकी मरज़ी के ख़िलाफ़ है उसको छोड़ते चलते हैं. यह प्रेम का रास्ता है.

कई ऐसे भाग्यशाली होते हैं जिन्हें गुरु ख़ुद प्यार करता है लेकिन ऐसे बहुत थोड़े होते हैं . ईश्वर करे आप में से हरेक ऐसा हो, कुछ ऐसे होते हैं जो गुरु को प्यार करते हैं . वे नहीं जानते कि वे क्यों ऐसा करते हैं . उन्हें कोई ग़रज़ नहीं होती, अगर कुछ होती भी है तो ईश्वर को पाने की ग़रज़ होतीं है . लेकिन यह ग़रज़ नहीं कहलाती . ये लोग भी भाग्यशाली हैं. कुछ ऐसे लोग हैं जो दुनियाँ से बेज़ार हैं और इससे छूटना चाहते हैं. ये आते हैं और गुरु से प्रेम करने लगते हैं. लेकिन परमार्थ की ग़रज़ के साथ-साथ इन्हें दुनियाँ की भी ग़रज़ होतीं है. ऐसे लोगों की संख्या बहुत है.

आपके यहां पहली चीज़ सतगुरु की तलाश है. सतगुरु वह है जो कामिनी, कांचन और यश - इन तीन चीज़ों से ऊपर हो. ईश्वर का पूर्ण भक्त हो. सिवाय ईश्वर की बात के दूसरी बात न करे. उसे आप से कोई ग़रज़ न हो. उसके पास बैठने से मन शाँत हो, उसकी कथनी और करनी एक जैसी हो, सिवाय दूसरों की भलाई के और कुछ न चाहता हो. अगर सौभाग्य से कोई ऐसा महापुरुष मिल जाय तो उससे अपना मन मिला दो, अपने मन

को तोड़ दो. जब उसके मन में आजाओगे तो मन मिल जायेगा. यही फनाइयत (लय) है जिसमेँ जिस्म तो मिलकर एक नहीं होता, मन एक हो जाता है, आदतेँ वैसी ही हो जाती हैं. यहां तक कि शकल भी बदल जाती है.

तुम जो बनना चाहते हो, पहले उसकी ख़्वाहिश करो और फिर उसके लिए यत्न करो. जितनी कोशिश करोगे उतना मिलेगा. जिस गुरु के ध्यान के साथ-साथ जीवन में एक बार भी आपको प्रकाश नज़र आया है, तो समझ लीजिये कि वह सच खण्ड तक पहुंचा हुआ है. पहले ऐसे गुरु की तालाश करो फिर उसका सत्संग करो और उसका दिया हुआ नाम लो. वह नाम चाहे राम हो, कृष्ण हो, ॐ हो या चाहें कोई और नाम हो. जिस नाम को जप कर उसने परमेश्वर को हासिल किया है वही नाम तुम्हें भी परमेश्वर की प्राप्ति करा देगा .

राम संदेश : अक्टूबर १९६८.

मन को दुनियावी इच्छाओं से साफ़ करो

मनुष्य गुरु- कृपा या ईश्वर-कृपा के लिए दुआ करता रहता है लेकिन गुरुजनों का कहना है कि यह भूल है. गुरु-कृपा या ईश्वर-कृपा हर समय हो रही है, एक पल भी बंद नहीं है. अगर वह बंद हो जाय तो ज़िंदगी नहीं रह सकती. फ़र्क़ सिर्फ महसूस या गैर-महसूस (आभास - अनाभास) होने का है. जिसने अपना पात्र बना लिया है, वह ज़्यादा कृपा महसूस करता है और जिसका अभी अधिकार नहीं बना है, वह कृपा महसूस ही नहीं करता. कृपा का महसूस होना या न होना हमारे अधिकार या पात्रता पर निर्भर है. इसलिए कोशिश अपने आप को पात्र बनाने की करनी चाहिए. गंगा बह रही है, लेकिन उसमें से एक शख्स उतना ही जल ले सकता है जितना उसके पास बर्तन है. जिसके पास लोटा है, वह लोटा भर पानी भर लेता है, जिसके पास घड़ा है वह घड़ा भर पानी भर लेता है.

सूरज चमक रहा है, सब पर गर्मी और रौशनी पड़ रही है. जितना जिसने अपने शरीर को रौशनी के लिए खोल रखा है, वह उतनी ही रौशनी और गर्मी पा लेता है. जिसने जितने कपडे पहिने हैं, उतना ही वह उससे महरूम (वंचित) रहता है. आग जल रही है, हज़ारों ही चीज़ें पास रखी हैं. किसी में उसका असर कैसा ही पड़ता है और किसी में कैसा ही.

सब पात्रता और अधिकार पर निर्भर है. गुरु और ईश्वर की कृपा हरेक पर हर समय हो रही है लेकिन जिसने जितने कपडे मन और माया के पहने हुए हैं, उसे उतनी ही कम कृपा अनुभव होती है. जिसने जितना अपने आप को बना लिया है यानी मोह और माया से अलहदा कर रखा है, वह उतनी ही कृपा ज़्यादा महसूस करता है. इसलिए ज़रुरत पात्र के बनाने की है. अपनी आत्मा पर से मन और माया के परदे हटाने की ज़रुरत है. पत्थर, वनस्पति,जानवर , मनुष्य, देवता, संत सब पर उसकी कृपा एक सी ही हो रही है लेकिन अंतर आभास और अनाभास का है. जिसके ज़्यादा आवरण हटे हुए हैं, उसे उतनी ही ज़्यादा कृपा महसूस होती है.

दूसरी बात यह है कि दुनियांदार ईश्वर की कृपा को समझते नहीं हैं. जब आदमी को दुनियां की चीज़ें मिलती हैं, उन में वह खुश होता है और समझता है कि ईश्वर की बड़ी कृपा है. वास्तव में वह ईश्वर से दूर होता जाता है. उसके और ईश्वर के बीच में माया आती जाती है. अगर उसकी दुनियां की चीज़ों पर आघात होता है तो वो समझता है कि मेरे ऊपर ईश्वर की कृपा नहीं हो रही है, हालांकि मामला इसके बिलकुल विपरीत है क्योकि इससे ईश्वर की नज़दीकी प्राप्त होती है.

जब दुनियां की किसी चीज़ से हमें तकलीफ पहुँचती है या वह चीज़ हमसे छीनी जाती है तो हमारे बुरे कर्मों की समाप्ति हो जाती है और जब कोई दुनिया की कोई चीज़ हमें हासिल होती है, तो शुभ कर्मों के फल का अंत भी हो जाता है. जब ईश्वर की नज़दीकी हो जाती है, उसका प्रेम मिल जाता है, बुरे कर्मों को हम छोड़ देते हैं तो बाक़ी सब कर्म खुद ही नाश हो जाते हैं और वह (ईश्वर) सब माफ़ कर देता है. इसलिए उसकी कृपा यह है कि माया के झगड़ों से छूट कर उससे नज़दीकी हो जाय और हमें हमेशा-हमेशा का सुख और दुखों से मोक्ष मिल जाय.

लेकिन दुनियांदार इसका उलटा समझते हैं. वे ईश्वर से छुटकारे के लिए दुआ नहीं करते, दुनियां की चीज़ों को प्राप्त करने के लिए दुआ करते रहते हैं और इस तरह यहीं पर फंसे रहते हैं. दुनियां का एक-एक ज़र्रा, मन की एक-एक ख्वाहिश हमारा हर वक्त विरोध करते हैं जिससे कि हमारा अपने असल (ईश्वर) से मिलन न हो. इसलिए जो आदमी दुनियां की इच्छाओं में फंसा हुआ है वह तो सच्ची कृपा चाहता ही नहीं बल्कि कृपा का विरोध करता है.

जब आत्मा का विकास संतो की कृपा और अभ्यास से होने लगता है तभी मालूम होने लगता है कि असली कृपा क्या है. सांसारिक इच्छाओं से अपने पात्र को बचाना है और यह जितना साफ़ हो जाता है उतनी ही उसकी कृपा अनुभव होती है. इसलिए हमारा फ़र्ज़ है कि अपने मन को हर समय दुनिया की इच्छाओं से आहिस्ता-आहिस्ता साफ़ करते रहें.

गुरुदेव तुम्हारा कल्याण करें.

राम सन्देश : दिसंबर, १९९३

वास्तविक आनंद कहाँ है ?

आम लोगों का यह ख्याल है कि दुनियाँ के सामान के अंदर सुःख का माद्दा मौजूद है, इसलिए दुनियाँ के सामान हासिल होने पर इंसान को सुःख प्राप्त हो सकता है. इसीलिए तमाम दुनियाँ के लोग दुनियाँ के सामान इकठ्ठे करने की कोशिश में लगे रहते हैं. कोई रूपये-पैसे में सुःख समझता है. उसका ख्याल है कि रुपया जमा होने पर हमेशा-हमेशा के सुःख की प्राप्ति और दुःख से निवृति हो जाएगी. इसलिए रूपये पैदा करने और जमा करने की उम्र भर कोशिश करता रहता है. हज़ारों झूंठ बोलता है, सैकड़ों बेईमानियाँ करता है, दुश्मनी-दोस्ती पैदा करता है, खुशामदें करता फिरता है, लोगों के गले कटवाता है, तब कहीं जाकर रुपया जमा होता है .

लेकिन उसको सच्चा सुःख, जिसके लिए यह सब यत्न किये थे नसीब नहीं होता. अगर रूपये में सुःख होता तो तमाम रूपये वाले सुखी होते. नतीजा और तज़ुर्बा इसके खिलाफ़ है. ज़्यादातर रईस (धनी) लोग दुखी नज़र आते है . रूपये से सुःख तो मिल सकते है, जो रूपये के अभाव में दुःख रूप बन जाते हैं, परन्तु पूर्ण रूप से सुःख नहीं होता, बल्कि रुपया खुद उनके लिए एक जंजाल बन जाता है.

दूसरा व्यक्ति औलाद में सुःख तलाश करता है, शादी करता है, हज़ारों मिन्नतें मांगता है, और जतन पर जतन करता है. औलाद पैदा होती है, उसकी परवरिश बड़े लाढ़-चाव से करता है. उनकी तंदरुस्ती क़ायम रखने के लिए हरेक क़ुरबानी करता है, न दिन का ख्याल है न रात का, न धूप की चिंता है न बरसात की. डाक्टरों के चककर लगाया करता है. गंडे-ताबीज़ वालों की खुशामदें करता है. कभी गधे के नीचे की मिटटी की तलाश करता है, कभी मसान पर दूध चढाने जाता है. पाल-पोसकर बड़ा हो गया. अब पढ़ाई की फ़िक्र है, फिर नौकरी की और फिर शादी की. सारांश यह है कि इसी के पीछे उसकी तमाम उम्र नष्ट हो जाती है. समझता यह है कि एक बात के पूरा होने पर सुःख हासिल हो जायेगा, लेकिन एक बात के खत्म होते ही दूसरी बात शुरू हो जाती है और ख़ुशी का मुँह देखना नसीब नहीं होता. अगर लड़का नालायक निकल गया तो भी रंज, और यदि मर गया तो उम्र भर का रोना. लो औलाद भी एक जंजाल हो गयी.

तीसरा व्यक्ति एक मकान में सुःख तलाश करता है. इधर मकान बन कर तैयार हुआ उधर उसकी मरम्मत की फ़िक्र पड़ गयी. मकान एक मुसीबत का घर साबित हुआ. कोई खूबसूरत औरत में सुःख प्राप्त करता है, तो कोई विद्या प्राप्त करने में. लेकिन असली सुःख मिलना दरकिनार, दो चार घंटों के लिए भी सुःख नहीं मिलता. थोड़ी देर के लिए परेशानियों से छुटकारा मिल जाता है. इसी को वह सुःख का नाम दे देता है.

हरेक चीज़ जिसमें वह सुःख तलाश करता है, उसके गले की हड्डी या फांसी साबित होती है. उम्र भर उसी में झूमता रहता है और आखिर में वही उसकी जान ले लेती है. उस रेशम के कीड़े की तरह जो अपने अंदर से तार निकलता है, आखिर में वह तार उसको चारों तरफ से घेर लेते है, हवा तक को रोक देते हैं, और वह कीड़ा दम घुट कर मर जाता है.

इन बातों को देखने से मालूम होता है कि सुःख दुनियाँ की चीज़ों में नहीं है वरना धनवान, पुत्रवान, खूबसूरत पत्नी वाले, बढ़िया मकान वाले और विद्वान सुखी होते. अब अगर सुःख इन चीज़ों में नहीं, तो फिर किन चीज़ों में है. नीचे की मिसालों को लेकर यह पता लगाने की कोशिश करते हैं कि सुःख कहाँ है?

एक बच्चा पचासों कंकड़ों से खेल रहा है और वह उन कंकड़ों को बड़ी हिफाज़त से रखता है. जब सोता है तो उनमें से कुछ तो अपनी जेब में रख लेता है और सोते वक्त उन पर अपना हाथ रख लेता है. लेकिन तब लोग बच्चे की इस हरकत को देखकर हँसते हैं. चार आदमी बैठ कर ताश खेल रहे हैं, बड़ा आनंद आ रहा है, न खाने की फ़िक्र है, न पानी की. उनको नहीं मालूम कि चारों तरफ क्या हो रहा है, और कितना वक़्त निकल गया. यदि उनके खेल में कोई बाधक होता है तो वह कहते हैं कि - भाई इस समय मत छेड़ो, बड़ा मज़ा आ रहा है. तभी तार आया कि घर में फलाँ सम्बन्धी बीमार है. अब उनमें से हर आदमी चाहता है कि ताश बंद करदे. वही चीज़ें जो सुःख का साधन थीं, दुःख का जरिया बन गयीं एक आदमी भूँखा है, रात को बासी-कूसी खाना लाकर उसके सामने रख दिया जाता है और उसमें उसे बड़ा आनंद आता है. लेकिन भूख मिट जाने पर उसी खाने को देखकर उसका जी मिचलाता है.

इससे यह सिद्ध होता है कि सुःख किसी और जगह है. सोचने पर पता चलता है कि जो चीज़ हमें मन से प्यारी होती है, उसके मिलने पर हमें सुःख मिलता है, यानी आनंद हमें उस चीज़ में मालूम होता है जिसमें हमारी तवज़्ज़ो (attention) की धार ज्यादा पड़ती है, यानी जितनी वह चीज़ हमें ज़्यादा प्यारी होती है, उतना ही ज़्यादा आनंद हमें उस के प्राप्त होने से होता है. इसका मतलब यह हुआ कि तब्बज़ो की धार एकत्र हो जाती है तो हमको बड़ा सुःख मिलता है जैसे यदि कोई व्यक्ति खाने का बड़ा शौकीन है तो उस चीज़ को, जो उसे सबसे अच्छी लगती है खा कर उसे बड़ा आनंद आता है. अगर कोईं प्रेमीजन है तो उसको अपने प्रियतम को देखकर बड़ी ख़ुशी प्राप्त होती है.

अब सोचो कि जब धारों में इतना आनंद है तो उस केंद्र में जहां से धारें निकलती हैं, कितना आनंद होगा? उस आनंद का वारापार नहीं है और जिसने खुशकिस्मती से उसकी झलक भी देख ली वह हर क़ुरबानी उसके लिए कर सकता है. हज़ारों दुनियाँ की बादशाहत उसके लिए हेय है. उसको देखकर, उसका अनुभव करके, किसी और चीज़ को देखने व अनुभव करने की इच्छा बाक़ी नहीं रहती. केवल उस आदमी की शुद्ध-बुद्धि ही इसका अनुभव कर सकती है जिस पर ईश्वर की कृपा हो और गुरु मेहरवान हो.

ऊपर के बयान को पढ़कर प्रेमी के दिल में यह जानने की इच्छा होती है कि क्या यह बयान सच है या दरअसल रचना में कोई ऐसा सतत आनंद का स्थान मौजूद है. यदि रचना में ऐसा कोई स्थान है तो कहाँ है और वहां तक पहुंचने का साधन क्या है? इन तीनों सबालों का जबाब संक्षेप में वर्णन करने की कोशिश की जा रही है.

पहला सबाल यह पैदा होता है कि क्या यह बयान सही है और रचना में दरअसल ऐसा कोई मंडल मौजूद है? यदि है तो कहाँ है, और हमको दिखाई क्यों नहीं देता? इसका उत्तर यह है कि यह तमाम सृष्टि और हमारा शरीर और साइंस के तमाम औज़ार हमको स्थूल रचना का ज्ञान दे सकते हैं, सूक्ष्म रचना का नहीं. सूक्ष्म रचना का ज्ञान हासिल करने के लिए हमको अपनी स्थूल इन्द्रियां शून्य करनी होंगी.

सूक्ष्म इन्द्रियां इस समय भी हमारे अन्दर मौजूद हैं, लेकिन उनकी तरफ़ बेपरवाही बरतने, और उनसे काम न लेने की वजह से वे बेकार हो गयीं है. उनको अभ्यास की मदद से जाग्रत किया जाता है. इसके लिए बड़े वक्त और अभ्यास व सत्संग की ज़रूरत है. लेकिन सच्चा ज्ञान हमको उसी वक्त हासिल होगा जब हम अपनी सूक्ष्म इन्द्रियों को जगाकर उस रचना को अपनी आँखों से देख सकेंगे.

फ़िलहाल हम अपनी उन ऋषि-मुनियों, संत-साधुओं या पूर्वजों की वाणी को देखें जो हर कौम में वक़्त-वक़्त पर पैदा होते रहे हैं. यह हस्तियाँ या तो पैदायशी ऊंचे यानी सूक्ष्म घाटों से उतरकर जीवों के फ़ायदे के लिए मनुष्य चोला धारण करते हैं या तप और अभ्यास करके उस गति को हासिल करते हैं. ऐसा करने से ज़रूर कुछ न कुछ विश्वास आ सकता है कि वास्तव में कोई ऐसा मंडल मौजूद है जहां पर पहुंच कर आदमी हमेशा के लिए दुखों से छुटकारा पा जाता है और हमेशा असली आनंद को भोग सकता है.

कृष्ण भगवान कहते हैं- " न वहाँ सूरज प्रकाश करता है न चंद्रमा, और न आग, लेकिन फिर भी वहाँ प्रकाश है. जहाँ पहुँचने पर इंसान दुनियाँ में लौट कर नहीं आता, वह मेरा परमधाम है." उपनिषदों में लिखा है

वह स्थान जिसका उपदेश सारे वेद करते हैं,जिसकी शिक्षा सब तपस्वी देते हैं और जिसकी इच्छा रखकर लोग ब्रह्मचर्य रखते हैं वह पद यानी स्थान हम बताते हैं- वह ॐ पद है.

हाफ़िज़ साहब फ़रमाते हैं कि- " यह मालूम नहीं कि मंज़िले मक़सूद किस जगह पर वाकय(स्थित)है, लेकिन इस क़दर मुझको मालूम है कि उस जानिब (और) से घंटे की आवाज़ आती है. कबीर साहब फ़रमाते हैं - "जो कोई इस भेद से वाक़िफ़ है वही जानता है कि हमारा देश कैसा है, हमारे देश में जाति, वर्ण, संध्या, नियम और आचार का कोई झगड़ा नहीं है, बिना बादलों के वहाँ बिजली चमकती है और बिना सूरज के वहाँ उजियाला है, वगैरह -वगैरह." गुरु नानक साहब फ़रमाते हैं - "सच-खण्ड की खोज करो और इंसानी जन्म सफल बनाओ."

इन सब संतों की वाणी से, जिनका जन्म ही मनुष्य की भलाई के लिए हुआ है और जो तमाम उम्र इंसानी जन्म की भलाई के कामों में लगे रहे, विश्वास आ सकता है कि ज़रूर इस नज़र आने वाली सृष्टि के परे कोई ऐसी सूक्ष्म रचना है जिसके भिन्न-भिन्न मंडलों से अलग अलग समय और स्थानों पर महान आत्माएं आयीं या भिन्न-भिन्न महात्माओं ने अभ्यास करके उन मंडलों तक पहुंच हासिल की, जिसका वर्णन उन्होंने अपनी वाणी में किया है.

उसी राज़ (तत्व) की और तालीम उन्होंने अपने शिष्यों को दी कि स्थूल दुनियाँ के आश्चर्यजनक मायाजाल में न फँसो, ज़रूरत के मुआफ़िक इस दुनिया से काम रखो और अपने निज घर की सुधि लो. और इसके साथ-साथ ये संत उस निज घर पहुँचने की युक्ति की तालीम भी देते रहे हैं. इन्हीं संतों को अवतार, पैगम्बर, औलिया, खुदा का बेटा, वगैरह-वगैरह नामों से पुकारते हैं. इन बातों को देखकर यक़ीन ज़रूर आता है कि अवश्य इस स्थूल रचना से परे कोई और सूक्ष्म रचना मौज़ूद है.

इसका विश्वास हो जाने पर दूसरा सबाल पैदा होता है कि यह देश कहाँ है? इसका उत्तर यह है कि - " पिण्डे सो ब्रह्माण्डे ". इंसान का इंसानी रूप सच्चे कुल मालिक का अंश है और वही गुण छोटे पैमाने पर इस आत्मा में मौज़ूद है जो बहुत बड़े पैमाने पर मालिके-कुल यानी परमात्मा में है. मालिक का पूर्ण रूप से अनुभव नहीं कर सकता. इसलिए इंसानी जिस्म को ध्यानपूर्वक जांचने से ही तमाम रचना का अनुमान हो सकता है. जैसे मालिक ने अपनी शक्ति से कुल रचना रची वैसे ही आत्मा ने अपनी शक्ति से यह शरीर रचा. इंसान के

जिस्म का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि यह तीन जिस्मों से मिलकर बना है. स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर (यानी मन का शरीर) और तीसरा कारण शरीर (यानी रूहानी शरीर.

इसी प्रकार से परमात्मा के भी तीन शरीर हैं. विराट, हरिण्यगर्भ और अव्यक्त. इंसान के स्थूल शरीर में छह चक्र हैं और चूंकि इंसान का स्थूल शरीर मन के जिस्म के नमूने पर बना है लिहाज़ा सूक्ष्म शरीर में भी छह चक्र हैं और सूक्ष्म शरीर कारण शरीर के नमूने पर बना है लिहाज़ा कारण शरीर के भी छह चक्र हैं. इस तरह इंसानी शरीर में १८ चक्र हैं - छह स्थूल, छह सूक्ष्म और छह कारण. इंसानी शरीर में छठे चक्र पर बैठकर (जिसको आज्ञाचक्र भी कहते हैं) आत्मा तमाम जिस्म को जान देती है. इसी तरह निर्मल चैतन्य देश में, यानी रूहानी देश के छठे स्थान में रूह के भण्डार (यानी सच्चे कुलमालिक) की बैठक है और बाकी देशों में इसकी इसकी चेतन धारें या किरणें फैली हुई हैं. जैसे इंसानी चोले में आज्ञा चक्र पर रूह की बैठक है, बाकी जिस्म पर उसकी चेतन धार या किरणें फैली हुई हैं और जैसे इस जिस्म में आत्मा का स्थान ही असली ज्ञान का, ज़िंदगी और आनंद का स्थान है, इसी तरह सत्यलोक असली बैठक उस परमात्मा की है जो तमाम ज्ञान और आनंद का भण्डार है.

इससे मालूम हुआ कि सच्चा सुख हासिल करने के लिए हर जिज्ञासु को ज़रूरी है कि वह अपनी आत्मा को इस पृथ्वी से हटाकर अपने जिस्म से परे, अपने मन से भी परे, हटा कर यानी जिस्म और मन के बारहों परदों से हटा कर (छह जिस्म के और छह मन के) निर्मल देश के छठे चक्र पर जो कि असली भण्डार रूहानियत का है, पहुँचावे, तभी सच्चा सुख प्राप्त हो सकता है. इसकी महिमा हर ज़माने में संतों ने गायी है. जो मज़हब आत्मा को इस स्थान पर पहुंचा सके वही सच्चा मज़हब है और जो अभ्यासी उस सत भण्डार पर पहुंच चुका है या वहाँ से उतर आया है वही संत सतगुरु है और जो गुरुआत्मा का रुख़ उस असली सत के भण्डार की ओर फेर दे,और वहाँ तक पंहुचा दे, वही सच्चा गुरु है.

दूसरे सबाल का भी उत्तर मिल गया है कि वह चक्र अठारहवाँ स्थान है. वही असली ज़िन्दगी का और आनंद का अनंत भण्डार है.

उस देश तक कैसे पहुँचें?

अब तीसरा सवाल यह रह जाता है कि वहाँ तक पहुँचा कैसे जाये? तो इसका जबाब पहले आ चुका है. सिर्फ सच्चा गुरु ही वहाँ तक पहुँचा सकता है. और कोई जरिया नहीं है. इसलिए सच्चे गुरु की तलाश करनी

चाहिए. इसमें शक नहीं है कि सच्चे गुरु का मिलना बहुत मुश्किल है, लेकिन यह दुनियाँ आलमे इम्कान है (इसमें कोई बात असम्भव नहीं है). जिसको सच्ची लगन लगी है, जो खोज रहा है, और सच्चा मुतलाशी (खोजी) है उसको ज़रूर एक दिन सच्चे गुरु मिल जायेंगे.

जिन खोजा तिन पाइयाँ, गहरे पानी पैठ ,

हौं बौरी खोजन चली, रही किनारे बैठ.

जिनको सौभाग्य और परमात्मा की कृपा से ऐसे गुरु मिल गए हैं उनको चाहिए कि लग-लिपट कर अपना काम बना लें, वरना इस दुनियाँ का क्या भरोसा? यह मुमकिन है कि प्रेमी भक्त और प्रभावशाली व्यक्ति मिल जावें, लेकिन ऐसे महापुरुष जिनका आचरण उच्च कोटि का हो मिलना कठिनं ही नहीं दूभर है. कोई-कोई अवसर का लाभ उठाकर औरों के चक्क्रों में फंसकर उस अवसर से हाथ खो बैठते हैं और फिर उम्र भर पछताते रहते हैं. फिर न मालूम ऐसा मौका उनको कब हाथ आये?

राम सन्देश : जनवरी-फरवरी २०११.

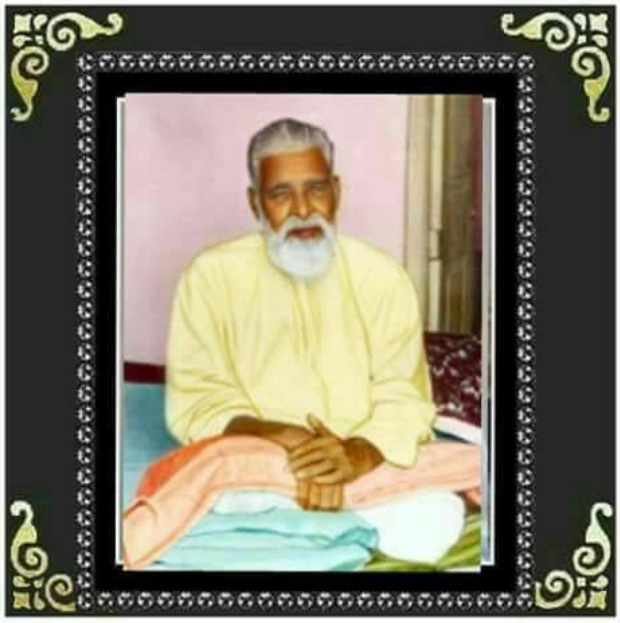

विश्वास और श्रद्धा

कानून को सच्चा मान लेना विश्वास है और सच्चा समझ कर उससे गहरा ताल्लुक (सम्बन्ध) पैदा कर लेना और वैसा ही बन जाना श्रद्धा है. कानून जो कुछ कहता है उसमें हमारी बेहतरी है. जितने भी प्राकृतिक नियम हैं, वे सब हमारी समृद्धि के लिए ही हैं. उनमें लग़्ज़िश (लाग लपेट) और कमी नाम को भी नहीं है. किसी भी कानून को ले लो और उस पर विचार करो. वह हमेशा से एक ही हालत पर क़ायम रहेगा. उसमें कभी फ़रक़ नहीं आता. न किसी के साथ रियायत है और न ज़्यादती. हमेशा एकरस, सबके साथ एक जैसा. क्या तुमने सूरज को कभी पश्चिम से निकलते देखा है? क्या मौसम की चाल में फ़र्क़ आया है? क्या कभी जानवर के आदमी और आदमी के जानवर पैदा हुए हैं? और क्या चौपायों को आसमान में उड़ते देखा है? गरज़ है कि कहाँ तक गिनवाया जाय. जहाँ पर हर चीज़ एक उसूल के मातहत काम कर रही है ओर हमेशा करती रहेगी, जब हर कानून ऐसा अटल है और उसमें तबदीली नाम को भी नहीं है, तो कानून को बनाने वाला और उसको क़ायदे में रखने वाला ज़रूर कोई है. यह एक ऐसी बात है जिसको बेवकूफ भी जानता है और समझता है. लेकिन अगर किसी ने आँख बंद कर रखी है और चिल्ला रहा है कि मुझको दिखाई नहीं देता, तो इसमें सूरज का क्या दोष है? आँख इस वास्ते दी गयी है कि उससे देखो-भालो. मन इसी वास्ते दिया गया है कि उससे सोचो और विचारो. अक्ल इसी वास्ते दी गयी है कि उससे नतीजे पर पहुंचो. इस ताक़त को तुम कोई नाम दो, इसकी कोई शक्ल क़ायम करो, यह तुम्हारी अपनी समझ पर मौक़ूफ़ (निर्भर) है.

उसके अनगिनत नाम हैं और जितने नाम तुम्हारे कानों में सुनाई पड़ते हैं, सब उसी के तो नाम हैं. उसके सिवा यहाँ है कौन और, इसका नाम है,और कोई भी नाम नहीं है. जो शक्लें तुम देखते हो और जो शक्लें तुम्हारे ख्याल में आ सकती हैं, सब उसी की शक्लें है और उसकी कोई भी शक्ल नहीं है. उसमें ज़रा भी शुबाह और कमज़ोरी नाम को भी नहीं है. उसूल अपना काम करता हुआ चला जा रहा है और बराबर काम करता रहेगा. यह ही उसूल क़ानून का और मालिक का हुक्म है. हज़ार मज़हिमत (प्रयत्न) करो, मगर यह अपने ढंग पर काम करता ही रहेगा. यह मुखालफत (विरोध) की ज़रा भी परवाह नहीं करता और इसे जहाँ ज़िंदगी को ले जाना है वहां पहुंचा कर रहेगा. बच्चा बाप के दिमाग से निकलकर माँ के गर्भ में आता है, कुछ दिनों वहीँ परवरिश पाता है, फिर बाहर आता है. जबान होता है, बूढा होता है और फिर मर जाता है. यह तुम रोज़ देखते हो. दुनिया में जब अधर्म बढ़ जाता है माद्दा (भौतिकता) का ज़ोर होता है, बुराई बढ़ जाती है, भलाई दब जाती है और कमज़ोर पड़ जाती है. बुरे लोग खुशहाल और भले परेशान नज़र आते हैं- प्रकृति की ओर से एक शक्ति आती है

जो काँट-छांट करती हुई फिर तवाज़ुन (संतुलन) ठीक कर देती है. उस शक्ति को चाहे आप पैग़म्बर या अवतार या खुदा का बेटा, चाहे जो कहो. वह उन उसूलों को समझाता है जो इंसान के अक्ल के बाहर की बातें हैं ओर जहाँ इंसानी अक्ल की पहुँच नहीं है. इंसान कहाँ से आता है, मरने के बाद कहाँ चला जाता है. कौन क़ानून बनाता है, कौन उसको बनाता है ओर क़ायदे में रखता है, वह क़ानून क्या है, वगैराह- वगैराह? जब उस पर यक़ीन आ जाता है, यह ही विश्वास है ओर जब यह यक़ीन पुख्ता हो जाता है, औऱ दिल से हम-आहंगी (ताल-मेल) अख्त्यार कर लेता है तो इसी को श्रद्धा कहते है .

ज़िन्दगी अपने कायभा पर काम करती हुई आ रही है. उसकी संभाल भी मालिक आप करता है. खाने के वक्त खाना और पीने के वक्त पानी खुद मिल जाता है. जहाँ ज़िंदगी वख्शी जायेगी वहां उस के ज़रूरी सामान क़ुदरत खुद मुहैया (उपलब्ध) कर देगी. यह तुम रोज़ ज़िंदगी के हर तबका (भाग या पक्ष) में देखते हो. यह देख लेना और सुन लेना और उस पर मज़बूती के साथ क़ायम रहना ही श्रद्धा है. जहाँ श्रद्धा और विश्वास में पुख्तगी आई, आप ही आप क़ानून के साथ मुआफक़त (सहयोग) और ताल- मेल आ जाता है और यह हालत हो जाती है कि चाहे ज़मीन और आसमान अपनी जगह से टल जाएँ, समुन्द्र पहाड़ पर लहराने लगे, सूरज और चाँद अपनी गर्दीश (चाल) छोड़ दें मगर ज़िंदगी कभी क़ानून का साथ नहीं छोड़ेगी. इस तरह क़ानून को समझना, उसके साथ ताल-मेल करना और फिर क़ानून पर हावी हो जाना और उसके दायरे से बाहर निकल जाना, इसी हालत का नाम मोक्ष, मुक्ति या निर्वाण पद में दाखिल होना है.

तस्लीम व रज़ा

मालिक पर विश्वास रख कर उसके आधीन रहना, यह ख्याल पुख्तगी के साथ रखना कि वह हमारा सच्चा बाप है, उसका हर काम हमारी भलाई के लिए है और वह सर्व-शक्तिमान है वह जो कुछ वह करता है, हमारी भलाई के लिए करता है और उसी में हमारी भलाई है और किसी में नहीं, यह समझ कर हर हालत में, चाहें वह हालत हमारी ख्वाइश के मुताबिक है या खिलाफ, खुश रहना तसलीम व रज़ा है. यह मालिक का क़ानून और उसूल है जो कभी गलती नहीं करता और जो नुक्श और ऐब से पाक (पवित्र) है. जिसको इतनी समझ आगयी फिर उसको परमार्थ में करना-धरना कुछ नहीं है. वह रोटियों को नहीं रोता और न दीन और दुनिया की कोई फ़िक्र उसको सताती है.

एक गरीब को लड़का पैदा हुआ. जब वह ज़रा बड़ा हुआ और माँ का दूध पीना छोड़ा, बाप रोने लगा कि लड़के को खाना कहाँ से आएगा. औरत सियानी थी, मुस्करायी और बोली - बच्चे को मेरे पेट में क्या तू ग़िज़ा (खुराक) देता था? जब वह पेट से निकलकर गोद में आया तो उसके लिए दूध क्या तू पैदा करता था? अब उसके दांत निकल आये हैं और उसने दूध पीना छोड़ दिया तो तुझे क्या परेशानी है? जो ताक़त अब तक ग़िज़ा मोहय्या (प्रदान) करती रही है वह अब भी ग़िज़ा मोहय्या करेगी. जब तूने पहले कुछ नहीं किया, तो अब क्या करेगा? विश्वास करो ईश्वर की दया पर. वह मुसब्बिउल असबाब (सब ज़रूरतों को पूरा करने वाला) है. झक मारेगा, अपने आप सारा इंतज़ाम करेगा. उसको आप फ़िक्र होगी. उसने बच्चे को पैदा किया है, वह जानता है कि बच्चे की परवरिश किस तरह होगी. तू क्यों नाहक दुखी होती है? जा अपना काम कर, और बात भी सच्ची थी .

जब दांत न थे तब दूध दियो!

जब दांत दिए तो का अन्न न देंहें !!

जल में थल में जो देत है सबको!

काम पड़े पर वह सुध लें हैं !!

जान को देत अनजान को देतु!

जहाँ को देत सो तोको देहें !!

काहे को सोच करें मन मूरख!

सोच किये कुछ काम न अईहें !!

जिसने बच्चे को पेट में दी ग़िज़ा!

गोद में पाला जिसने दूध पिला !!

वह जहाँ का है हाक़िम आला !

हर जगह है उसका बोलबाला !

दीन व दुनियां का वह खालिक है !!

वही राज़क और राणज़ाक़ है !

भूके को देता है नान जवीं!

नहीं उसमें है बुग्ज़ नफरत चौकीं !!

वोही है बेकसों का पुश्तों पनाह !

वेबसों की उसी की सिमत है राह !!

वही यतमों को पालने वाला !

वही बेबाओं का सच्चा रखवाला !

कारसाज़ व रहीम व दानिश वर !!

वह खुदा पाक जात है बरतर !

किस लिए फ़िकर से परेशान हैं !

जिसने पैदा किया वह पालेगा !!

आप गिरते को वह संभालेगा !

मर्द खामोश हुआ, काम काज में लगा. फ़िकर काफूर (दूर) हुई. मायूसी हट गयी और मालिक ने उसके काम में बरकत दी और वह घर खर्च आसानी से निकालने लगा.

प्रत्यक्ष देख रहे हो, फिर भी फ़िकर है. मुतफशीर (चिन्चित)और परेशान हो. क्यों नहीं सबर और रज़ा का तरीक़ा अख्त्यार करते?. मज़हब के लम्बे चौड़े व्याख्यान हर जगह होते हैं. मगर मालिक की जात पर कुछ भरोसा नहीं. इसलिए ज़रूरी है कि संतों के सत्संग में जाओ. जहाँ तुमको तसलीम व रज़ा की तालीम मिलेगी. तुममें विश्वास और श्रद्धा पैदा होगी और तुम सुखी होंगे. इस तरीके पर चलने से तुम अपाहिज और निकम्मे नहीं बन जाओगे, कानून आप तुमसे सब कुछ करा लेगा. वह गाफिल नहीं रहता.

राम सन्देश : जनवरी , १९५५

संत मत में वेदान्त के साधनों का समन्वय

वेदान्त में छै : साधन बताए हैं जिनके बिना परमार्थी के रास्ते पर नहीं चल सकता. ये हैं : (१) शम (२) दम (३) उपरति (४) तितिक्षा (५) श्रद्धा, और (६) समाधान. इसके बाद समर्पण होता है. ये सभी साधन लगभग सभी मतों में किसी न किसी रूप में प्रयोग में लाये जाते हैं. बिना इनके मन नहीं सधता.

शम- शम पहला साधन है. मन को किसी ऐसी चीज़ में लगा दो कि जहाँ पर वह ठहरे और उसको आनंद मिले. यानी उसको किसी बिंदु पर स्थिर कर दो. जब मन स्थिर हो जायेगा तो उसके साथ आत्मा भी ठहरेगी क्योंकि मन और आत्मा दोंनों एक साथ चल रहे हैं. आत्मा का जो अन्दर का आनंद है वह प्रकट होने लगेगा. मन को किसी चीज़ पर ठहराने से जो आनन्द मिलता है, वह मन का आनन्द नहीं है क्योंकि मन तो बेजान है. उसमें जो आनन्द है वह आत्मा का प्रतिविम्ब है क्योंकि आत्मा आनन्द स्वरूप है. मन को सब तरफ़ से हटाकर एक ही चीज़ के ध्यान में लगा देना होता है. अब इसके साथ- साथ यदि उसे किसी ऐसे महापुरुष के ध्यान में लगाओगे जिसका चरित्र भी पूर्णता को प्राप्त कर चुका है और जिसने ईश्वर की प्राप्ती कर ली है तो इससे तीन फ़ायदे अपने आप हो जाते हैं. मन अन्दर की तरफ़ यानी अन्तर्मुखी हो गया, चरित्र उच्च हो गया और ईश्वर का प्रेम मिलने लगा. इस वास्ते बतलाया गया है कि जो अन्दर focus (प्रतिविम्ब) रखो वह किसी ऐसी जीवित महान आत्मा या किसी महापुरुष का हो जिसने ईश्वर की प्राप्ती कर ली हो, उसका ध्यान बनाओ. यह शम है.

दम - जब मन ऊँचा उठने लगा तो जो इन्द्रियाँ विषयों में लगी हैं और जिनसे मन को ग़िज़ा मिलती है जिसके कारण वह इंद्रियों की तरफ़ भागता है, तो वह एक ही बिंदु पर स्थिर हो गया, और उसमें से जो शक्ति बाहर की तरफ़ जाती थी, वह रुक गयी और एक तरफ़ यानी अन्दर की तरफ़ को केन्द्रित हो गयी. इस तरह मन को बड़ी आसानी से इंद्रियों के विषयों से हटाया जा सकता है. यह 'दम ' है जिसका अर्थ है इंद्रियों का दमन करना. पहले-पहल इंद्रियों का दमन करने में बड़ी मुश्किल होती है क्योंकि मन इंद्रियों के द्वारा दुनिया की तरफ़ को भागता है. इंद्रियां बेजान हैं और उन्हें जो शक्ति मिलती है वह मन से मिलती है जो आत्मा पर सवार हैं. उदाहरण के तौर पर हम और आप बैठे हुए हैं, बातचीत कर रहे हैँ, और बाहर लड़के शोर कर रहे हैं लेकिन हमेँ सुनाई नहीं देता. कान, यानी सुनने की इंद्रिय तो मौज़ूद है, फिर शोर सुनाई क्यों नहीं देता. विषय की तरफ़, जो उसके सुनने का कार्य है, वो क्यों नहीं जाती? इसका कारण यह है कि मन की शक्ति बजाय कानों के तरफ़ के, अन्दर की तरफ़ को है, आपका ध्यान यहाँ (सत्संग में) लग रहा है. ऐसे ही आँखों का है. आप किसी के सोच-

विचार में पड़े हुए हैं, आँखें खुली हुई हैं, कोई चीज़ सामने से गुज़र गई और वह दिखाई नहीं देती, तो आंखें तो प्रकाश नहीं है. आँख में तो जब फ़ोकस पड़ता है किसी चीज़ का तो वह चीज तब दिखाई देतीं है जब अन्दर और बाहर की लाइट एक हो जाती है. अन्दर से बाहर लाइट आती हैं और वह बाहर के प्रतिविम्ब को अन्दर ले जाती है. इस प्रकार जब दोंनों लाइटें मिल जाती हैं तब किसी चीज़ का अनुभव होता है. अन्दर लाइट है, लेकिन सूरज छुपा हुआ है तो क्या दिखायी देगा? सूरज निकला हुआ है और ख़्याल दूसरी तरफ़ है तो भी दिखायी नहीं देग . ख़्याल भी बाहर की तरफ़ है और सूरज भी चमक रहा है यानी रोशनी हो रहीं है तब दिखाई देगा. ऐसा ही सभी इंद्रियों का हाल है.

उपरति और तितिक्षा - विषयों से मन और इन्द्रियाँ हटकर इस तरह अपने अन्दर सिमिट जाती हैं जिस तरह कछुआ अपने हाथ -पाँव समेट लेता है. कछुए का स्वभाव होता है कि जब कोई बाहर से छेड़ता है तो वह अपने हाथ-पावँ और सिर को अन्दर की तरफ़ सिकोड़ लेता है. फिर उसको कोई ख़तरा नहीं रहता. हमारा मन कछुए की तरह है जो इंद्रिय रूपी हाथ पांवों से बाहर को जा रहा था. उसको बाहर से हटाकर अन्दर में ले आयें तो अब वह बेफिक्र हो गया अब बाहर से उसके ऊपर कोई आपत्ति नहीं है, अन्दर अपने ध्यान में लगा हुआ है. इंद्रियां जो उसको बाहर की ओर खींच रहीं थीं, उनका दमन हो गया, अब मन में शांति आ गयी. अब तुम्हारे अन्तर में जो आनंद हो रहा है, मन पर रोक लगने से उसकी झलक मिलने लगी. उसे प्राप्त करके ऐसा लगने लगा कि बाहर संसार की चीज़ों में, भोगों में, जो आनंद है वह तो भीतर के आनंद का हज़ारवां हिस्सा भी नहीं है. इस वास्ते हम बाहरी चीज़ों को क्यों देखें? हम यहीं चाहेंगे कि आँखें बंद करके उस भीतर के आनंद को ही देखते रहें. इस तरह मन दुनिया से उपराम हो जाता है. अब उसको अन्दर से आनंद आने लगा तो दुनिया की चीज़ों से उसका वास्ता नहीं रहा. अब गरमी-सर्दी, इज़्ज़त-बेइज़्ज़ती और बाहर के अच्छे बुरे प्रभावों की उसके लिए कोई कठिनाई रही ही नहीं. अगर उसकी साधना के रास्ते में कोई बाहरी कठिनाई आती है तो अन्दर का आनंद उसको हटा देता है. गुरु का काम कर रहे हैं, आनंद आ रहा है. अचानक किसी बच्चे ने आकर छेड़ दिया या परेशान करने लगा. भले ही हम उसको प्यार करते हों तो भी हम उसको हटा देते हैं. हर किस्म की कठिनाई जो उस सार वस्तु को हाँसिल करने में जिसके लिए हम यत्न कर रहे हैं, रुकावट डालती है, उसको हटा देते हैं. गरमी, सर्दी, इज़्ज़त, बेइज़्जती, दुनियाँ का माल, दुनियाँ की मुश्किलात या और भी जितनी रुकावटें, जितने द्वन्द हैं उन सब को अपने प्रियतम की राह से हटा देना 'तितिक्षा ' है.

श्रद्धा - जब तक दुनियाँ की क़दर है तभी तक आपको कठिनाई मालुम देती है गुरु के पास जाने में. अभी एक बहन हमसे कह रहीं थीं कि हम आना तो चाहते हैं लेकिन रुपया हमारे पास नहीं है. रुपया तो है, मगर दुनियाँ की क़दर ज़्यादा है. इस वास्ते रुपये इस तरफ़ ख़र्च नहीं कर सकते और जब दुनियाँ से उपराम हो गये और गुरु के सत्संग को हमने मुख्य समझ लिया तो चाहें जिस तरह भी हो राह ख़र्च के लिए रुपया बचा कर वहाँ जाएँगे और हर रुकावट को पार करेँगे. अगर पैसा नहीँ है और पैरों चलकर, इतनी तक़लीफ़ उठाकर जाता हैं, तो वह कितना शौक़, कितनी श्रद्धा लेकर जाता है. उतना ही उसका फल (फ़ायदा) पाता है क्योंकि शौक़ चीज़ पर निर्भर नहीं करता, बल्कि मन की हालत पर निर्भर करता है. मन में श्रद्धा नहीं है, उत्साह नहीं हैं, आप किसी फ़क़ीर के पास जा रहे हैं, चाव है नहीं. वहाँ पर जाकर बैठेंगे तो क्या ख़ाक अनुभव होगा? दूसरा बड़े उत्साह से जाता है, शौक़ और श्रद्धा लेकर जाता है, वह समझता है कि मैं किसी महापुरुष के पास जा रहे हूँ तो वहाँ जाकर उसको बड़ा आनंद मिलता है. तो यह फ़र्क़ क्यों हो गया ? तुम्हारे मन का फ़र्क़ है. उस महापुरुष में कुछ कमाल है या नहीं मगर पहली बाधा तो तुम्हारा मन है. अगर मन में श्रद्धा और उत्साह है तो तुम कुछ न कुछ आनंद ज़रूर महसूस करोगे और अगर उत्साह बिलकुल नहीं है तो चाहें फ़क़ीर की सोहबत में कितना भी आनंद हो, तुम्हें कुछ भी महसूस नहीं होगा . यह श्रद्धा हैं.

समाधान और समर्पण - जब मन शुद्ध हो गया, इन्द्रियाँ शुद्ध हो गईं और उन्होंने विषयों की तरफ़ भागना बंद कर दिया, मन में किसी चीज़ की इच्छा नहीं है, तो अब ऐसी हालत पैदा हो गई कि अपनी शंकाओं का समाधान करो. जो तुम्हारे संशय हैँ, ईश्वर के मुताल्लिक़, मज़हब के मुताल्लिक़, उनको दूर करो और किसी ऐसे महापुरुष के सामने, जिसने पारब्रह्म का ज्ञान प्राप्त कर लिया हो, शास्त्रों का ज्ञाता हो, तुम्हारा और सारे जगत का हितैषी, उसके पास जाओ और बड़े अदब से बैठो. बेअदबी से कुछ हाँसिल नहीं कर सकते. जब तुम्हारी सब शंकाओं का समाधान हो जाये तब स्वयँ को पूरी तरह से उनके समर्पण कर दो. तन, मन, धन सब कुछ उन पर न्योछावर कर दो और अपनी आप को पूरी तरह उनमेँ लय कर दो. जीवन के लक्ष्य की प्राप्ती हो जायेगी.

ईश्वर आप सबको समर्पण और गुरु में लय होने की शक्ति प्रदान करें .

राम संदेश : जुलाई १९७९

सच्चे आनंद की प्राप्ति

इन्सानी ज़िन्दगी (मनुष्य जीवन) का आदर्श क्या है? मनुष्य जीवन का मिलना एक बड़ी खुशकिस्मती की बात है जिसका ख़ास ध्येय यह है कि हम परमात्मा का अनुभव करें और दुनियावी प्रपंच से छुटकारा पावें. अगर यह क़ीमती ज़िन्दगी इस ध्येय की पूर्ति के लिए न लगाई गई तो इन्सान और जानवर की ज़िन्दगी में कोई फ़र्क नहीं. अगर हम सच्चे भक़्त बन जायें तो हम कर्मों के जंजाल से छूट जायेंगे और हमें इंद्रियों के जंजाल से हमेशा-हमेशा के छुटकारा मिल सकता है.

हम दुनियावी मामलों के बारे में सोचते रहते हैं. जब तक हम ख़्वाहिशात उठाते रहेंगे, हम कभी ख़ुश नहीं रह सकते. जब हमारा मन और बुद्धि ईश्वर की तरफ़ लग जाती है तभी हमें सच्ची ख़ुशी हांसिल होती है. परमात्मा की तरफ़ तब्ज्जह (attention -ध्यान) लगाने और हमेशा-हमेशा को इस प्रपंच से छूटने और सच्ची ख़ुशी प्राप्त करने का साधन यहीं है कि हम परमात्मा से मिलने की ख़्वाहिश जगायें और हर समय उसे याद रखें.

ईश्वर हर समय और हमेशा हमारे दिल में रहता है लेकिन हमें उसके दर्शन तभी हो सकते हैं जब हम अपने मन को वासनाओं से साफ़ कर लेंगे. हमें उस तक पहुँचने के लिए ख़्वाहिश उठानी चाहिये. उसको हमेशा याद रखना चाहिये. उस तक पहुँचने का जतन करना चाहिये. उसी की बात सोचना चाहिये और आखिर में अपने आप को पूरी तरह उसके सुपुर्द कर देना चाहिये. जब हम पूरे तौर से अपने आप को उसको समर्पण कर देते हैं तब हमें अपने अन्तर में उसके दर्शन होते हैं और हमारी खुदी, जो हमारे और उसके बीच में परदा है, और जिसकी वज़ह से हम उसका अपने घट में हर समय रहते हुए भी दर्शन नहीं कर पाते, हमेशा के लिए जाती रहती है. ऐसा आदमी ईश्वर का ही रूप हो जाता है. उसको सिर्फ़ शांति और आनंद ही नहीं मिलता, बल्कि इसके साथ -साथ वह ईश्वर के कामों का ज़रिया बन जाता है जिससे दुनिया का सबसे बड़ा उपकार होता है. वह पृथ्वी पर ज़िस्म में ईश्वर रूप होकर रहता है और उसकी पूजा भी ईश्वर के समान होतीं है.

ईश्वर अपने भक्तों की पूजा करता है . गीता में लिखा है कि वह भक्त जिसको ज्ञान हो गया है या जिसने मोक्ष प्राप्त कर ली है, सचमुच ईश्वर है. सचमुच जब एक भक्त पूर्ण रूप से ईश्वर में समर्पण करके, उससे मिलकर एक हो जाता है तो वह ईश्वर हो जाता है. हम दुनियाँ के अन्दर बाहरी चीज़ों को हासिल करते हैं. लेकिन ऐसे भक्तों ने पूर्ण रूप से अपनी अपने मन को जीत लिया है और तब अपनी खुदी को ईश्वर में मिला दिया है, ईश्वर को पा लिया है. ऐसी महान आत्माएं जगत के लिये वरदान हैं. उन्होंने अपनी ज़िन्दगी को दूसरों के

लिए ईश्वर प्राप्ती का एक साधन बना दिया जिसका सहारा लेकर मनुष्य उस महान शक्ति ईश्वर तक पहुँच सकता है. इसीलिये इस इन्सानी ज़िन्दगी का लक्ष्य उस ईश्वर को जो इसके अन्दर रहता है, प्रकट करना है. हमको चाहिये कि हम आहिस्ता-आहिस्ता दुनियावी ज़िन्दगी से अपने मुँह को अन्दर की तरफ़ मोड़ें और उस ईश्वर को अपने ही अन्दर पायें. तभी हमको सच्ची ख़ुशी हासिल हो सकती है.

"ईश्वर के नाम का जाप ईश्वर तक पहुंचाता है ". साधारण मनुष्य के लिए जो दुनियाँ में फँसा हुआ है ईश्वर तक पहुँचने के लिये सबसे सरल उपाय यही है कि ईश्वर के नाम का उच्चारण बराबर किया जाये. उसके नाम का उच्चारण करने से वह उसे उस ईश्वर से मिला देता है जो उसके दिल में रहता है. जितना ही वह इस पवित्र नाम का उच्चारण करता जायेगा वह अपने अन्दर उस परमात्मा के नज़दीक पहुँचता जायेगा. अपने अन्दर की बुराइयों को निकालने, आनन्द और ईश्वर को हासिल करने का इससे आसान तरीक़ा और कोई नहीं है. नाम के उच्चारण से केवल मन ही शुद्ध नहीं होता बल्कि नाम भक्त को भगवान से मिला देता है.

मैं नाम की बरक़त जो आपको सुना रहा हूँ, यह अपना ही तज़र्बा नहीं है बल्कि दुनियां के सभी संतों का यही तज़र्बा है. इसीलिए मेरी आपसे यही प्रार्थना है कि ईश्वर की सच्ची भक्ति करो. उसमें सच्चा विश्वास लाओ. तब सारे जगत में ही उस ईश्वर के दर्शन होंगें. ईश्वर का नाम लेने में कोई दिक्कत नहीं है. उसके लिए कोई ख़र्च भी नहीं करना पड़ता, न कोई ख़ास तरीक़ा बैठने का है और न किसी चीज़ की ज़रूरत है.

तुम उसका नाम हर समय हर जगह ले सकते हो. इस अभ्यास से कुछ दिनों बाद खुद-व- ख़ुद तुमको अपने अन्दर शब्द सुनाई देगा. तुम्हारे अन्दर ईश्वर का प्यार ख़ुद- व-ख़ुद ही पैदा हो जायेगा और दिन-व-दिन उससे नज़दीक़ी होती जायेगी .

राम संदेश : दिसम्बर २००३

सत्संग में आने का असली फायदा

जिस तरह दुनियां के कामों को बिना सोचे समझे, बिना ढंग के, बिना शऊर के, करने से कामयाबी नहीं मिलती, उसी तरह सत्संग में शामिल होकर, बिना सत्संग के सिद्धांतों को समझे, बिना सलीक़े और ढंग से सत्संग करने से सत्संग का असली फायदा नहीं होता. बहुत से लोगों का ख्याल है कि उनका काम सत्संग में शामिल हो जाना और शामिल होकर बराबर सत्संग करना है और कुछ नहीं - और इतने से ही सब कुछ हो जायेगा. इससे मालूम होता है कि उन्हें सत्संग का उसूल ही नहीं मालूम या उन्होंने ठीक से इसे समझा ही नहीं है.

सत्संग में शामिल होने की वजह यह है कि अब उन्होंने सत्संग को कबूल कर लिया है और उस पर चलने को तैयार हैं. चलने से ही रास्ता कट सकता है और मंज़िल तक पहुंचा जा सकता है और फिर उसके फल की आशा की जा सकती है. जब तक अभ्यासी सत्संग में शामिल होकर उसके उसूलों को समझकर अभ्यास को बाकायदा शुरू नहीं करेगा, वह असली मतलब से दूर रहेगा. इसमें तो शक नहीं कि जैसे जल के भीतर का पत्थर जल के बाहर के पत्थरों से शीतल रहता है, ऐसे ही सत्संग के अन्दर पड़ा हुआ जीव बहुत कुछ दुनियाँ की तपन से बचा रहता है. लेकिन सत्संग में शामिल होने का असली मतलब यह नहीं है और ना ही सत्संग इस गरज़ के लिए क़ायम किया गया है.

सत्संग का असली मतलब यह है कि मन की सफाई करके अभ्यासी दुरुस्ती से अभ्यास कर सके जिससे आहिस्ता-आहिस्ता जीव के दिल में संसार की तरफ से उदासीनता पैदा होकर, अपने सच्चे मालिक के चरणों में अनुराग पैदा हो और वह जीते जी अपना उद्धार होते देखकर अपने भाग्य को सराहे, और ईश्वर का बुलावा आने पर ख़ुशी-ख़ुशी यहाँ से रवाना हो और मालिक के चरणों में समां जाए. जो अभ्यासी ऐसा कर सकता है, वो सत्संग का मक़सद समझता है.

हमारे यहाँ सत्संग को असली परमार्थ की शिक्षा देने का मदरसा कहा जाता है. जो प्रेमी भाई चेतकर सत्संग करते हैं, इसकी गरज़ (ध्येय) को सामने रखते हैं, वो सत्संग को सलीक़े और ढंग से करते हैं और सत्संग से असली फायदा उठाते हैं. जो लोग ऐसा नहीं करते वो इस फायदे से महरूम (वंचित) रह जाते हैं. चेत कर सत्संग करने से चार बातें सच्चे परमार्थी के अन्दर प्रगट होनी चाहिए, जो इस तरह हैं :

पहली- पूरा और सच्चा यक़ीन परमात्मा की हस्ती का, उसके हर जगह मौजूद होने का और गहरा शौक उसके दर्शन का पैदा होना चाहिए.

दूसरी - संसार के भोग-विलास का सामान होते हुए और इस्तेमाल में आते हुए भी उसको सच्ची ख़ुशी न मिले और वह यह चाहता रहे कि संसार से जल्दी से जल्दी छूटकर वो अपने सच्चे पिता (परमात्मा) की शरण में पहुँचे.

तीसरा - यह ख्याल बराबर उठते रहें कि हमसे ऐसे काम होते रहें जिससे परमात्मा हमसे खुश रहे और हमें अपनी मोहब्बत का दान दे. हमसे कोई ऐसा काम न हो जिससे उसकी नाराज़गी और दूरी हो.

चौथी - उसको ज़ाहिरी और अंदरूनी सत्संग मिले जिससे उसे पूरा निश्चय हो जाए कि कोई गुप्त शक्ति हर वक़्त मेरी देखभाल और सँभाल कर रही है.

जिन अभ्यासियों को ये चार बातें हासिल हो जाती हैं वे ही सत्संग की क़ीमत समझते सकते हैं और वे ही परमात्मा के प्रेम के अधिकारी होते हैं और इसी तरह सच्चाई से चलकर वो मोक्ष हांसिल कर सकते हैं.

राम सन्देश : सितम्बर , १९९५

सर्वप्रथम कर्त्तव्य क्या है - समर्पण क्या है?

आप कोई काम अपनी इच्छा से करते हैं और उससे अपनी वह इच्छा पूरी करते हैं वहआपको अच्छा लगता है. यह संस्कार कमाना है. जब आपने सब कुछ ईश्वर के सुपुर्द कर दिया, आप ईश्वर के आसरे बैठे हैं. जो कुछ हो रहा है ठीक हो रहा है, जो होगा वह भी ठीक होगा. यह समर्पण हो गया. तो जब समर्पण हो गया और आप अपनी किसी इच्छा से काम करते ही नहीं, तो संस्कार कहाँ से बनेंगे? अगर आप अपने को कर्ता समझते हैं और प्रयत्न भी कर रहे हैं तो आप कर्ता तो बन ही गए, चाहे वह काम होने का हो या न हो. जब आप कर्ता हैं और उसके लिए पुरुषार्थ भी कर रहे हैं तो उसका फल मिलेगा ही. इस तरह आगे का कर्म बना.

" सुपुर्दो मतों माओ खेशरा,

तू जाने हिफाज़त कमो वेशरा. "

भावार्थ : मैंने तो अपने आपको पूर्ण रूप से ईश्वर के सुपुर्द कर दिया. अब वह चाहे कम दे या ज़्यादा दे, वह ज़ुम्मेदार है. मैं कुछ नहीं चाहता.

श्रीकृष्ण बराबर समझाते चले गए हैं. सब तरह के तरीके बताये, सब प्रकार के योग बतलाये. अष्टांग योग, वेदांत, संन्यास आदि. सब समझाते चले गए. सबसे अन्त में भगवान कहते हैं - " ऐ अर्जुन! अगर तू यह भी नहीं कर सकता, वह भी नहीं कर सकता तो तू मेरा सच्चा दोस्त है, मैं तुझे एक राज़ की बात बताता हूँ. तू सब कर्मों को छोड़कर मेरी शरण मैं आ जा. " सर्व कर्माणि परित्यज्य माम शरण व्रज , यानी मेरी शरणागत हो जा. मैं तुझे यकीन दिलाता हूँ कि मैं तुझे भवसागर से पार कर दूंगा. कृष्ण कौन है - ईश्वर और अर्जुन कौन है - जिज्ञासु जो अभ्यासी है.

इसे समझिये कि हमारा सबसे मुख्य कर्तव्य क्या है? इस समय आप अपना कर्तव्य क्या समझ रहे हैं ? दुनिया में तरक्की करना, या कर्त्तव्य यह समझ रहे हैं कि अपने परिवार, बाल बच्चों का पालन पोषण करना, लड़के की शादी करना या कोई और सांसारिक कर्तव्य. ये कर्तव्य तो हैं, मगर ये किसके कर्त्तव्य हैं ? ये आपकी स्थूल देह ही से तो ताल्लुक़ रखते हैं. कल को यदि यह देह ही नहीं रही तो ये कर्तव्य कैसे पूरे होंगे? लेकिन हमारी आत्मा, जो हमें सच्चा आनंद देने वाली है, वह तो हज़ारों बरस से मन के चंगुल में फंसी है. उसकी तरफ क्या हमारा कोई कर्तव्य नहीं है? अपने किसी साधारण मित्र के लिए कोई काम कर देना तो हम

अपना कर्तव्य समझते हैं लेकिन अपनी चिरकाल से बन्धन में फंसी हुई आत्मा को मुक्त करने के लिए हमें जो यह मनुष्य शरीर मिला है, भविष्य में फिर यह शरीर मिले या न मिले, उसके लिए हमारा क्या कोई फ़र्ज़ नहीं है?

हमारे मन में जो दुनियाँ की इच्छाएं उठती हैं उन्हें पूरा करना हम अपनी ड्यूटी समझते हैं. मान लीजिये कि आपके मन में यह ख्याल आता है कि हमारा बेटा नाराज़ है, लाओ उसे खुश कर लें. लेकिन ये कितने दिनों के लिए? क्या वह हमेशा खुश रहेगा? अगर वह नाराज़ है तो, और खुश है तो, दोनों हालातों में भी,आपका सर्वप्रथम कर्तव्य यह है कि आपकी आत्मा जो मन की दुनियाँ में फंस गयी है,उसको आज़ाद करायें. इस काम के लिए कितना जीवन शेष है? इसका किसी को क्या पता? किसी को भी अपनी मौत का पता नहीं है, न जाने कब आजाये. आदमी यह सोचता है कि दुनियाँ की और सब ड्यूटी तो उसकी हैं लेकिन अपनी आत्मा को मन के चंगुल से आज़ाद कराने की ड्यूटी उसकी नहीं है.

कृष्ण भगवान कहते हैं कि अपनी आत्मा को मेरे समर्पण कर दो यानी सर्वप्रथम कर्तव्य वह यही बताते हैं कि अपने आप को पूरी तरह उनको समर्पित कर दो और तुम्हारे सारे काम वे पूरा कर देंगे. हम बीसियों बार गीता पढ़ते हैं लेकिन अपने मन केमुताबिक़ उसका ऐसा मतलब निकल लेते हैं जिससे दुनियाँ के मोह और माया में फंसते रहते हैं.

आपका सर्वप्रथम कर्तव्य यह है कि ईश्वरको याद करो और दुनियां के जितने और कर्तव्य हैं उन्हें गौण समझो और जब तुम उन सबको पूर्ण कर जाओ तो अपनी इस ड्यूटी को भी छोड़ कर अलहदा हो जाओ - सम्पूर्ण समर्पण. समर्पण का मतलब यह है कि तुम्हारी अपनी कोई इच्छा शेष न रहे. अपने को कर्ता न समझो, द्रष्टा समझो. समझ लो कि यह दुनिया एक सिनेमा हो रहा है. शिव भगवान शक्ति के साथ ताण्डव नृत्य कर रहे हैं, खेल हो रहा है. उसको देखो और जो पार्ट (अभिनय करने को) तुम्हें दिया गया है उसको अदा करो. तुम दूसरे के पार्ट में क्यों दखल देते हो. यह तो प्रक्रति माँ खेल खेल रही है. यह दुनिया किसकी है? क्या तुमने यह दुनिया बनाई है? क्या तुम यहाँ अपनी मर्ज़ी से आये हो ?

लाये हयात, कज़ा ले चली ,

अपनी ख़ुशी न आये, न अपनी ख़ुशी चले.

हमें तो एक पार्ट अदा करने के लिए इस दुनियां में भेजा गया और माँ अपना खेल खेल रही है. तुम अपना पार्ट अदा करते रहो. ईश्वर का ध्यान रखो, और शिव भगवान का जो खेल हो रहा है उसे देखते चलो. याद रखो, आदमी को ईश्वर ने फांसा है यहाँ जन्म देकर और ईश्वर ही उसे निकालेगा. लेकिन फंसते हम खुद हैं क्योकि हम अपनी इच्छाएं पैदा करते हैं. जिस हालत में उस ईश्वर ने हमें रखा है, उसी हालत में हमें खुश रहना चाहिए - यही दीनता है.

अगर आपके मन में कोई इच्छा उठती है और उसे पूरी करना चाहते हो तो उस ईश्वर का आसरा लेकर पूरी करो और यदि वोह इच्छा पूरी न हो तो भी खुश रहो. यह भी समर्पण में आजाता है. अपनी इच्छाएं उठाना और अपने आप को कर्ता समझना - यह समर्पण कहाँ है? जहाँ समर्पण है वहां कर्म कहाँ? जहाँ कर्म नहीं वहां बदला कहाँ है? कर्म कहाँ पैदा होता है - इच्छाओं से. जब किसी वस्तु की इच्छा होती है तो हम कर्म करते हैं और जब वह वस्तु हमें हमें प्राप्त हो जाती है तो उसे हम अपना समझने लगते हैं और जब वह प्राप्त नहीं होती तो हम दुखी होते हैं. प्राप्ति हो जाने पर भी हम यह ख्याल करते रहते हैं कि न जाने कब यह चीज़ हमसे छूट जाएगी. यानी हर हालत में उसी का ख्याल रहता है. उस वस्तु से मोह हो जाता है और हम उसमें फंस जाते हैं.

अगर इच्छा न उठे और किसी वस्तु की प्राप्ति आपको हो जाय तो यह समझो कि यह वस्तु मेरी नहीं है, भगवान जब चाहेगा इसे वापस ले लेगा. तो लगाव या मोह कहां हुआ? इस तरह से रहो - दुनिया उसकी (ईश्वर की) समझो - उसको दृष्टा बनकर देखते रहो. हर चीज़ उसकी है, तुम भी उसके हो, तुम्हारा शरीर भी उसीका है. तुमको जो पार्ट अदा करने के लिए दिया गया है, अपनी शुद्ध बुद्धि और सच्चे दिल से उसको अदा करते रहो. क्या होगा? मैं क्या जानूं? क्या किसी चीज़ का फल तुम्हारे काबू मैं है? तुम कर सकते हो काम को, सो किये जाओ. नतीजा तो वह जाने क्या होगा? सब उस पर छोड़ दो. यह समर्पण है.

जहाँ समर्पण है, वहां इच्छा नहीं होती. जहाँ इच्छा नहीं, वहां कर्म नहीं. जहाँ कर्म नहीं, वहां आवागमन नहीं. जितने महापुरुष हुए हैं सबने यही कहा है कि अपनी कोई इच्छा मत रखो. बुद्ध भगवान ने भी यही कहा है कि इच्छाएं ही सब बंधन की जड़ हैं. जो इच्छाओं को जीत गया, वही मन को जीत जाता है. जिसने इसको जीत लिया, उसने दुनियां को जीत लिया, उसका आवागमन ख़त्म हो गया. इसी का नाम मोक्ष है. मोक्ष का मतलब है, मुक्त हो जाना. काहे से? सारी इच्छाओं से. इसके बाद आनन्द ही आनन्द है. उसके बाद है हमेशा-हमेशा के लिए उसमें लय हो जाना. मोक्ष का मतलब ईश्वर में लय हो जाना है. पर इसके लिए पहले इच्छाओं से आज़ाद होजाना होगा. मेरे गुरुदेव (पूज्य लाला जी महाराज) ने एक बार कहा था कि मैंने इस शख्स को (मुझे)

मोक्ष दे दी. हमें इस बात का ख्याल भी नहीं था. हमें हमारे एक गुरुभाई ने बताया कि यह बात उन्होंने अपने रजिस्टर में दर्ज़ कर रखी हैं.

परमात्मा से कुछ मत मांगो. मांगो तो उसका प्रेम मांगो. हालाँकि यह भीनहीं माँगना चाहिए. हरि इच्छा हो, जो आपकी मर्ज़ी हो, वोही हो. सबसे ऊंची प्रार्थना यही है. "हे प्रभु! आपकी इच्छा पूर्ण हो." अगर आप मुझको नर्क में रखना चाहते हो तो बहुत अच्छा, केवल आपकी याद बनी रहे. मुझे न दीन चाहिए, न दुनियाँ. अगर कोई इच्छा हो भी तो यह हो कि तुम्हारा (परमात्मा का) प्यार बना रहे, तुम्हारी याद बनी रहे. इस दुनियाँ का क्या माँगना? यह तो तबाह (नष्ट) होनी ही है. हम मांगें कि हमें एक लाख रुपया मिल जाएँ - मिल भी गया और कल को मौत हो गयी तो भी उसको भोगने के लिए भी दुबारा आना पड़ेगा. तो ऐसी चीज़ मांगें जो हमेशा हमारे साथ रहे, मरने पर भी हमारे साथ रहे - यानी ईश्वर प्रेम ही मांगें. ईश्वर से सिवाय उसके प्रेम के और कुछ मत मांगो, वो दे या न दे. अगर सच्चे दिल से तुम उसका प्यार मांगते हो तो वोह तुमको देगा और इससे तुम्हारा इतना भला होगा कि तुमको ख्याल भी नहीं है.

हर व्यक्ति अपने-अपने मत का प्रचार करता है लेकिन जिस तरीके को आपने अपनाया है उसी को पकडे रहो जब तक कि आपको आत्मा का असली ज्ञान न हो जाए. इसके बाद तुम्हें अख्तियार है कि चाहे खामोश होकर बैठ जाओ और चाहे तो और तरक़्क़ी करके देख लो.

जैसा भाव - वैसा लाभ

जो भाव संसारी चित्त में बसा हुआ है जिसकी कार्यवाही के लिए साधक का मन धन-दौलत की फ़िकर में लगा हुआ है, वोह मौजूद रहे और परमार्थ भी बन सके, यह नामुमकिन है. संसारी भय, भाव और चिन्ता मन से निकल देनी होगी. संसार उजाड़ देना होगा. बाहर की कार्यवाही बंद कर देने से या सब छोड़ देने से मतलब नहीं है बल्कि अन्तर में, दिल में, जो भय, भाव और चिन्ता संसार की भरी हुई है, उसको दूर कर देना होगा. अन्तर में जिस कदर संसार का भय, भाव और चिन्ता भरी हुई है उसका ज़रा सा ही असर बाहर में आता है, बाकी अन्तर में अम्बार का अम्बार भरा पड़ा है जिसकी इस वक्त खबर भी नहीं है. जिस कदर उसको दिल से निकाला जायेगा तब ईश्वर का प्रेम पैदा होगा और तब ही मालिक की नूरानी शक्ल (ज्योतिर्मय रूप) के दर्शन होंगे.

इसलिए हर साधक को चाहिए की प्रभु प्रेमकी वाज़ी में संसार को दाँव पर लगा दे और हाथ झाड़ कर उठने को तैयार हो जाये. जब सब कुछ झाड़ देगा तभी सब मिलेगा. यानी संसार और संसार की वस्तुएं और उनके लिए

जो भय, भाव और चिन्ता दिल में बसी हुई है उसको हाथ झाड़ कर छोड़ देगा और हार जाएगा तब मालिक के प्रेम की दौलत और धन जो की एक अपार भंडार है, ज़रूर मिलेगा . मालिक की साथ प्रेम का ऐसा नाता जोड़े जो मालिक ही मिल जाए . वह भक्त जिसने मालिक की प्रेम की बाज़ी पर संसार को लगा दिया है वही ईश्वर की ज्योति की जगमगाहट क़े दर्शन यानी मालिक के नूरानी रूप के दर्शन प्राप्त कर सकेगा.

ज़ाहिरी तौर पर (प्रकट रूप में) दुनियां के त्याग से कुछ हांसिल नहीं होगा, जब तक कि संसार का रस दुनियां में और साधक के भाव में मौजूद है. मालिक के चरणों में पहुँचने के लिए तो अनुराग सहित वैराग्य होना चाहिए - यानी मालिक से अनुराग और दुनियां से वैराग्य बढे. जब संसार के झटके खायेगा, उनसे दुखी होकर और कोई रास्ता न पायेगा, तब चित्त संसार से उदास होगा और उपरामता प्राप्त होगी. तभी इस बात की चाह पैदा होगी कि इस बात की तलाश करें कि सच्चा सुख कहाँ है और उसके पाने के क्या साधन हैं? गुरु को जिस भाव से देखोगे वैसा है लाभ होगा. मनुष्य समझोगे तो मनुष्य का सा लाभ होगा. अगर ईश्वर समझोगे तो ईश्वर का सा लाभ होगा .

ईश्वर तुम्हारा कल्याण करें .

राम सन्देश -नवंबर १९९४

साधक की उन्नति के लक्षणों की पहचान स्व-निरीक्षण से मुमकिन है

सत्संगी भाइयों को यह जानने की अक्सर इच्छा होती है कि सत्संग में आकर हमने कुछ तरक़्क़ी की है या नहीं, और यदि की है तो किस हद तक? लोगों की यह शिकायत होती है कि हमें सत्संग में शामिल हुए बरसों बीत गए लेकिन हम जहां से चले थे, आज भी वहीँ हैं. यह बात सच भी है क्योकि उन्होंने सच्चे मायने में अपने अन्दर परिवर्तन करने की कभी कोशिश नहीं की. अपने बुरे कर्मों पर परदा डालने की आदत पड़ गयी है. अगर कोई गुनाह उनसे हो जाता है और उनकी आत्मा उन्हें गुनाह करने से रोकती है तो वे अपने आप को झूंठ-सच बतला कर ये कोशिश करते हैं कि हम जो कुछ कर रहे हैं वह हालात (परिस्थितियों) के अनुसार ठीक हुआ है.

यह उनका भ्रम है कि गुनाह को भी गुनाह न समझ कर उसे सही समझते हैं. अगर सत्संगी भाई अपने दिलों पर हाथ रख कर देखें तो पता चलेगा कि वो अभी तक तरक़्क़ी की राह पर खड़े होने लायक़ भी नहीं हुए हैं. नियत समय पर संध्या पूजा कर लेना ही काफी नहीं है, बल्कि इसमें तो दुनियाँ की लेश-मात्र चाह भी गुरु को अर्पण करनी होगी. हममें से कितने ऐसे हैं जिन्होंने दुनियावी इच्छाओं को त्याग दिया है? शायद एक भी नहीं. लेकिन उन्नति सब चाहते हैं. नीचे लिखी कुछ बातें अगर ध्यान में राखी जाएँ तो हमें अपनी सही हालत का पता लग जायेगा :

(१) गुरु में श्रद्धा और विश्वास पहले से कुछ घटा या बढ़ा - अगर घटा है तो उसका सबब सोचने की कोशिश करें. अगर अपने में दोष दीखें तो भगवान से प्रार्थना करें, रोयें और गिडगिडाएँ ताकि वो दोष दूर हो. अगर गुरु में दोष दीखने लगे तो उन्हें अपने मन का ही ऐब समझो. परमात्मा गुण-दोषों से रहित है और गुरु उसका ज़ाहिरी (प्रकट) रूप है इसलिए वह भी गुण- दोषों से रहित है. सत्संग में आकर पूर्ण विश्वास के साथ गुरु धारण करने के बाद दोष निकालने का हक़ अब आपको नहीं है. गुरु के बारे में बहस (वितर्क) मन से, ध्यान से निकालनी होगी और गुरु की आज्ञा में चलना होगा. बुज़ुर्गान का कहना है कि अगर गुरु को कोई भगवान से अलग समझता है तो वह 'काफिर ' (नास्तिक) है.

(२) यह देखना चाहिए कि अपने स्वभाव में कुछ फ़र्क़ आया है या नहीं- स्वभाव में पहले जितनी खराबियाँ थीं वो कुछ दूर हुई या नहीं. अच्छे स्वभाव के मायने खुशामद के नहीं बल्कि सरल, शुद्ध बरताव के हैं. स्वभाव बहुत ही मीठा होना चाहिए. अगर कोई कड़बी या सख्त बात कहनी हो तो बहुत तहज़ीब और सरलता से कहनी चाहिए, जिससे दूसरों के दिल पर चोट न लगे. बाज़ लोगों का विचार है कि चूंकि हम सच्ची और खरी

बात कहते हैं इसलिए हम साफ़-साफ़ और अकड़ कर कह सकते हैं, चाहे किसी को वह बुरी लगे या भली यह अज्ञान है. सच बोलने वालों में कुछ घमंड सा आ जाता है जो कि सच्चे परमार्थी को बिलकुल भी नहीं होना चाहिए. अच्छे स्वभाव की दूसरी पहिचान यह है कि ऐसे आदमी को पडोसी प्यार करने लगते हैं. अगर हमको पडोसी नफ़रत की निगाह से देखते हैं तो सोचकर देखें कि कहीं खोट अपना तो नहीं है और उसको दूर करने की कोशिश करना चाहिए.

(३) वाणी वश में हो रही है कि नहीं- हमारी बोलने की इच्छा भी कम हो रही है या नहीं. ऐसा आदमी जो अध्यात्म विद्या में उन्नति कर रहा हो कभी भी बेलगाम नहीं बोलेगा. मौक़ा और माहौल देखकर, अपने पर क़ाबू करके बोलेगा. फ़िज़ूल बातें करके कभी भी अपने साथ बैठने वालों का वक्त ख़राब नहीं करेगा, जो बात कहेगा तौल कर कहेगा और कहने से पहले यह देख लेगा कि इससे किसी का दिल तो नहीं दुखेगा. अगर तरक़्क़ी हुई है तो पता चल जायेगा.

(४) अभ्यासी तरक़्क़ी के रास्ते पर है तो दूसरे के ऐबों (दुर्गुणों) पर हमेशा पर्दा डालेगा और अपने ही दोषों पर नज़र रखेगा- अगर दूसरों के कुछ ऐब उसे नज़र भी आते हैं तो उन्हें नज़रअंदाज़ कर देता है या ऐसा बन जाता है जैसे उसे कुछ पता ही नहीं.

(५) उसकी ज़रूरियात (आवश्यकताओं) में कमी आती चली जाती है- ऐय्याश (ऐश्वर्य) और आडंबर के सामान को वह फ़िज़ूल समझकर त्यागने लग जाता है, उनसे उसे दिलचस्पी नहीं रहती. अपने पास उन्हीं चीज़ों को रखता है जिन्हे वह निहायत ज़रूरी समझता है. बहुत सादा मिज़ाज़ हो जाता है. दुनियाँ के लोग उसे कंजूस भले ही कहें लेकिन वह ऐसा होता नहीं है.

(६) उसे झूंठ से नफ़रत और सच्चाई से प्रेम होता जाता है - धीरे-धीरे वह सच्चाई मुजस्सिम (साक्षात) बन जाता है. उससे झूंठ इस तरह डरकर भागता है जैसे शेर को देखकर लोग घरों में छिप जाते है . उसके रहन-सहन, आचार-विचार और व्यवहार में सच्चाई का ही प्रदर्शन होता है. झूंठे लोग उसके पास जाते हुए दहशत मानते हैं, घबराते हैं.

यह मानना पड़ेगा कि सच्चाई की ज़िंदगी बसर करना आसान खेल नहीं है. इस उसूल पर चलने वालों से दोस्त, पडोसी, सम्बन्धी, द्वेष रखने लगते हैं, लेकिन जो तरक़्क़ी की राह पर जा रहा है वह इसकी परवाह न करते हुए सच्चाई की राह पर बढ़ता चला जाता है. उसमें आत्मबल बढ़ जाता है और वह लतीफ़ (कोमल) हो

जाता है. सच्चाई पर चलने वाले को बे-इन्तहा (असीम) मुसीबतों का सामना करना पड़ता है, लेकिन उन्हें बर्दाश्त करते-करते उसकी आत्मिक शक्ति इतनी मज़बूत हो जाती है कि जिससे उसे फ़ायदा ही फ़ायदा होता है.

(७) ऐसा आदमी कभी फ़िज़ूल खर्च नहीं होता - वह धन जोड़ना पसंद ही नहीं करता. अपने खर्च लायक रख कर बाकी धन अच्छे कर्मों में खर्च कर देता है, जैसे मोहताज़ों को दान देना, ग़रीब लड़के-लड़कियों को पढाई के लिए खर्च देना वगैरा.

(८) उसे नींद कम आने लगती है - अगर पहले वह ८ या १० घंटे सोता था तो तरक़्क़ी करने पर ४ या ६ घंटे से ज़्यादा नहीं सोता. हर समय उसका ध्यान भजन में ही लगा रहता है . काम के निश्चित समय के अलावा समय में उसका ध्यान ज़्यादा समय के लिए अपने गुरु के बताये शग़ल (साधन -अभ्यास) में, धार्मिक किताबें पढ़ने या ईश्वर चर्चा करने में ही लगता है. जिनका ध्यान इन बातों में नहीं लगता वे तरक़्क़ी से दूर हैं और उनकी दुनियावी चाहें अभी ज़बर (प्रबल) हैं. उन्हें चाहिए कि अपनी दुनियावी चाहों को कम करते जाएँ.

(९) क्रोध में कमी आ जाती है - पहले अगर थोड़ी सी बात पर क्रोध आ जाता था अब उतनी ज़ल्दी नहीं आता और अगर आता भी है तो ज़ल्दी चला जाता है. कहीं ज़रूरत पड़े भी तो क्रोध दिखावटी और काम चलाने भर के लिए करता है, अपने मन पर उसका प्रभाव नहीं होने देता.

(१०) पराई बहू-बेटियों की तरफ ध्यान भी नहीं जाता - अगर पहले जाता भी था तो धीरे-धीरे कम हो जाता है और एक हालत ऐसी आ जाती है कि सामने आने पर पहचानता भी नहीं . स्त्रीयों की मौहब्बत तो दरकिनार, उनकी सोहबत तक से हमेशा बचता है और विषय-भोगों में भी बेरुखी (उपेक्षा) आ जाती है.

(११) दूसरों को हमेशा अच्छी राय देता है - ऐसा करते वक़्त अपना स्वार्थ उसमें कभी शामिल नहीं करता.

(१२) प्रेम की भावना बढ़ती जाती है - यह प्रेम का मार्ग है. ईश्वर प्रेम है और गुरु प्रेम-स्वरुप हैं. उनमें अपने को लय करके उसका स्वभाव प्रेममय हो जाता है. उसमें कोई गरज़ शामिल नहीं रहती. स्वार्थ से किया हुआ प्रेम झूंठा प्रेम होता है. प्रेम किसी से भी हो हमेशा बेलाग होना चाहिए.

(१३) दुःख, मुसीबतें और तक़लीफें ज़्यादा आने लगती हैं - वह उन्हें ख़ुशी से बर्दाश्त करता है. यह तरक़्क़ी की निशानी है. ये चीज़ें भक्त को ईश्वर की तरफ़ से नियामत में मिलती हैं. दुनियाँ में खुशहाल नहीं रहने पाता.

दुःख-मुसीबतें तो पल-पल पर भगवान की याद को ताज़ा करती रहती हैं. जिस हाल में परमात्मा रखता है उसी में खुश रहता है कभी शिकवा-शिकायत नहीं करता और परमात्मा का शुकराना अदा करता रहता है

(१४) अपनी निन्दा उसे बुरी नहीं लगती - वह निंदक को अपना मित्र और हितैषी समझता है क्योकि उसके ज़रिये उसे अपने दोष दिखाई पड़ते हैं, जिन्हे वह दूर करने की कोशिश करता है. अगर कोई उसकी झूंठी निन्दा करता है तो भी उसका बुरा नहीं मानता बल्कि उनके सुधार के लिए दुआ मांगता है.

(१५) आलस्य में कमी आती जाती है - कभी बेकार बैठना पसंद नहीं करता. अगर दुनियाँ का कोई काम करने को नहीं भी होता तो भगवत भजन में ही अपने आप को लगाए रखता है.

(१६) एकांत सेवन की इच्छा रखता है - ज़्यादा भीड़-भाड़ से उसकी तबियत घबराती है. इसकी वजह यह है कि ध्यान एकांत में अच्छा जमता है, इसीलिए उसे एकांत सेवन अच्छा लगता है.

(१७) निष्पक्ष विचारों की आदत बढ़ती जाती है - हरेक से समानता का व्यवहार होने लगता है, किसी का पक्ष-विपक्ष नहीं करता. अपना निर्णय देने में अपने संबंधों का भी लिहाज़ नहीं करता.

(१८) हमेशा नेक, धर्म और मेहनत की कमाई से गुज़ारा करता है - कुछ लोगों की धारणा है कि यदि वेतन कम है और घूंस या रिश्वत गुज़ारा करने के लिए ले ली जाये तो कुछ बुरी बात नहीं है. कोई-कोई इस विचार के होते हैं कि ठेके वग़ैरह में पाँच-फीसदी लेना तो हमारा जायज़ हक़ है. कोई-कोई चोरी -छिपे रिश्वत लेते हैं, उसे ज़ाहिर नहीं करना चाहते. ये सब बातें गलत हैं.

नौकर पेशा लोगों को अपनी तनख्वाह के अलावा कुछ भी लेना, चाहे वह नक़द हो या किसी चीज़ की शक्ल में हो या सेवा की शक्ल में, हर तरह ग़लत है. यहां तक कि ये भी नेक कमाई नहीं कही जा सकती. सत्संग में शामिल होने पर अगर रिश्वत लेना छूट जाय या आदत में कमी आने लगे तो समझना चाहिए कि तरक़्क़ी की तरफ बढ़ रहे हैं लेकिन उसका ग़रूर नहीं होना चाहिए. सत्संग में तरक़्क़ी और पूजा में ध्यान लगने के लिए हक़ और हलाल की कमाई निहायत ज़रुरी है.

(१९) बहुत सी बातें वगैर पढ़े ही समझ में आने लगती हैं - अगर एकाग्र चित्त होकर बैठ सकते हों और शब्द और प्रकाश में ध्यान जमने लगा हो और चढ़ाई कर रहा हो तो बहुत से ग़ैबी इल्म (परा-ज्ञान) उसको

ऊपर से मिलते हैं. बहुत सी बातें उसको अपने आप मालूम हो जाती हैं जिसकी पुष्टि होती है - धार्मिक किताबों से.

(२०) गुरु या परमात्मा में विश्वास निहायत पक्का हो जाता है - यहाँ तक कि भोजन, वस्त्र या दूसरी ज़रुरी चीज़ों की उसको चिन्ता ही नहीं रहती. रोज़ ब रोज़ इसकी चिन्ता कम होती जाती है.

(२१) दीन या दुखी, मौहताज़, धर्मात्मा और भले लोगों से हमेशा मित्रता करता है - द्वेष किसी से नहीं करता. ऐसे मनुष्य की दुश्मन भी ईमानदारी और सच्चाई से तारीफ करते हैं.

ये बातें जो ऊपर लिखी हैं, उनसे अपनी हालत का खुद मिलान कर लें. अपनी हालत को जांचने में अपने आप को धोखा देने की कोशिश नहीं करनी चाहिए. अगर दूसरे को धोखा दिया जाये तो उसका काट हो सकता है लेकिन खुद को धोखा देने वाले इन्सान की उन्नति कभी मुमकिन नहीं है.

राम सन्देश : सितम्बर- अक्टूबर :२००४

साधना के अनुभव

आत्मा उस आदि शक्ति से निकलकर, जिसकी वह किरण है, ब्रम्हाण्ड में उतरी किन्तु यहां पर उसके ऊपर अंतःकरण (मन + बुद्धि +चित्त + अहंकार) यानी सूक्ष्म माया का पर्दा चढ़ा. जब वहां पर भी अपने संस्कारों की वजह से अचेत रही, तो इस पिंड देश में उतारी गई जो कि मलीन माया का रूपक है. यानी जहां इंद्रिय भोग का रस मिलता है, ताकि वह अचेत आत्मा चेत अवस्था में आ जावे. यहां आकर वह अपने पिछले संस्कारों के बस चेत अवस्था में तो आगई, लेकिन इंद्रिय भोगों मेँ फस गई, यानी अपने असली देश को भूल कर इस पिंड देश को अपना देश समझ बैठी और यहां के भोग विलास को अपना ध्येय समझ बैठी. जब तक ऊपर के परदे न हटें उसको अपने असली देश का ध्यान नहीं आ सकता और न अपने असल को ही समझ सकती है.

बुद्धि -- जिसकी वजह से यह आत्मा इस तमाम दुनियाँ की सारी योनियों में श्रेष्ठ मानी जाती है- और जो उसका असली साथी है-इस दुनियाँ की मलीन माया में फस गयी, इसी को अपना लिया और जो भी वह सोचती है अपने स्वार्थ के लिए सोचती हैं. अतः बजाय छुटकारा पाने के वह दुनियाँ में फसती जाती है और दुःख पर दुःख उठाती है. सुःख भी मिलता है परंतु वह तो थोड़ी देर को मिलता है. अब अगर वह इस तरह फंसती ही रहे या फंसी पड़ी रहे, तो उसे (आत्मा को) कभी भी आपने वतन (निज देश) की याद न आवे और वह कभी भी छुटकारा न पावे.

परमात्मा के प्रेम से यह दुनियाँ पैदा हुई है. परमात्मा चाहता है कि जैसे मैं सदा- सदा आनंदित या ख़ुश हूँ, मेरे जैसे अनेक हो जावें. जब जीव दुनियाँ में इस तरह फंस जाता है ,तो उसकी (परमात्मा की) दया और मोहब्बत की लहर में जोश आता है और तब संत, ऋषि, औलिया, पैग़म्बर, अवतार वगैरह का जन्म होता है जो उस जीवात्मा को आनंद की तरफ़ ले जाना चाहते हैं और उसके हित की बात बताते हैं.

जब तक जीव दुनियाँ की झूठी मुहब्बत में फँसा है, जो थोड़ी देर का सुःख देकर उमर भर को रुलातीं है और आवागमन में फंसाती है नहीं छूटता, तब तक उसको ज्ञान नहीं होता और अपने हित की बात नहीं सुनता. जीव का यह मोह, दुनियाँ की तकलीफों, दुनियाँ की बेबफ़ाई, यहां की नाशवान हालत को देखकर, बार-बार तकलीफें उठाकर कम होने लगता है. यही काल का क़र्ज़ा देना होता है. जब उसे अपने सँस्कार में तकलीफें उठा-उठा कर तज़ुर्बा हो जाता है कि दुनियाँ दुःखों का घर है और यहां पर असली सुःख मिलना मुश्किल ही नहीं बल्कि नामुमकिन हो जाता है, तभी वह जीव संतों की सोहबत (संग) क़बूल करता है. यह पहला सबक़ है.

संत-मत केवल एक ईश्वर में विश्वास करता हैं. सूक्ष्म रूप में वह 'शब्द ' है, प्रकाश हैं, प्रेम है, आनंद है, जिनकी वृत्ति बाहर की ओर है. वे उसे अन्तर्मुखी बनायें. सतगुरु से उसकी युक्ति जानकर आँतरिक ध्यान करने का अभ्यास करें. ईश्वर तो सभी जगह मौज़ूद है.

इधर- उधर भटक कर समय नष्ट न करें. उसे अपने अंतःकरण में देखें. इस काम में ऐसे महापुरुष का सहारा लें जिसने आत्मसाक्षात्कार कर लिया है, तभी फ़ायदा होगा. बिना गुरु के फ़ायदा नहीं होगा. गुरु की मदद से हम अपनी attention (ध्यान) को अंतःकरण पर केन्द्रित कर सकेंगे. जलता हुआ दीपक ही बुझे हुए दीपक को जला सकता है. इसलिए संतों ने बार -बार कहा है कि बिना आत्मदर्शी (गुरु) का सहारा लिए साधारण जिज्ञासु अपने अंतःकरण के पर्दों को साफ नहीं कर सकता. जब तक परदे साफ न हों, आवरण न हटें तब तक प्रीतम के दर्शन कैसे हो सकते हैं? जब तक आप दुनियाँ से बेज़ार (दुखी) न होंगें तब तक ईश्वर प्रेम (जो आप में प्राकृतिक रूप से मौज़ूद है लेकिन आवरणों से दबा हुआ है) जागेगा नहीं. यदि कोई वास्तव में पूर्ण संत है तो उसकी सोहबत से आवरण साफ होने लगते हैं और ईश्वर प्रेम जागने लगता है. उसके पास बैठने से, बिना कुछ बोले, बिना कुछ पूछे, आनंद का, शीतलता का आभास होने लगता है, परंतु यह स्थायी नहीं रहता. यदि आप लगातार उनके पास जाते रहें, उनका सत्संग करते रहें तो क्रमशः दुनियाँ से बेज़ारी, उपरामता होने लगतीं है. हालाँकि पहले तो यह भी अस्थाई होती है परंतु सत्संग और अभ्यास से इनमें मज़बूती आने लगती है.

हमारी आत्मा ईश्वर का अंश है, ईश्वर की बेटी ह, और मन शैतान की औलाद है, शैतान का बेटा है. यदि हम गुरु के आश्रित नहीँ रहेँगे तो शैतान हम पर हावी हो जायेगा और हमारी आत्मा का हनन कर लेगा. सतगुरु सर्व विकार रहित होता है. वह काम -क्रोधादिक विकारों के भंवर जाल से ऊपर निकल चुका होता है, उसका रास्ता जाना हुआ होता है. अतः उसकी आज्ञानुसार चलना और उसके अनुकूल अपना आचरण बनाना चाहिए. यदि कोई ऐसा करेगा तो निःसंदेह वह काम-क्रोधादिक विकारों के भँवर जाल से निकलने में सफल हो सकेगा और शैतान उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकेगा. इसलिए सच्चे गुरु की खोज करो.

जब आत्मा दयाल देश से उतरती हुई इस पिण्ड देश (मनुष्य शरीर) में आई तो जिस-जिस चक्र पर ठहरी वहाँ पर एक शब्द हुआ और एक एक प्रकाश. इस तरह अठारह चक्र बने. अब स्वाभाविक तरीक़ा यह है कि यह आत्मा जिस रास्ते से आयी उसी रास्ते वापस ऊपर को जावे. शब्द को सुनना या प्रकाश को देखना और अपनी सुरत (attention) को चक्रों पर ठहर -ठहरा कर ऊपर चढ़ाते जाना ही संतों का सुरत-शब्द-योग है. तीन तरह से बहुधा हम दुनियाँ में फसते हैं- देखकर, सुनकर और सूंघकर. अतः इनसे सम्बंधित इंद्रियों (आँख , कान, नाक) पर ताला लगा दो और इनका मुँह अन्दर की ओर फेर दो. अन्तर का शब्द सुनो और अन्तर का प्रकाश देखो. धीरे- धीरे अभ्यास करके प्रकाश और शब्द पर अपनी attention(तवज्जह, सुरत) को जमाओ लेकिन उनमें फँसो मत क्योंकि ये भी रास्तें की चीजें हैं. अपनी चढ़ाई जारी रखो जब तक कि धुर-धाम में न पहुँच जाओ. यदि सचमुच तुमने किसी सच्चे गुरु का सहारा पकड़ लिया है तो वह तुम्हें धुर-धाम में पहुंचा कर छोड़ेगा. ऐसे महापुरुष का तो केवल ध्यान करने से ही उसके सब गुण स्वतः ही तुममें उतरते चले आयेंगे और एक दिन तुम वही बन जाओगे जो वह स्वयँ है.

अगर कोई शिष्य सतगुरु में पूर्ण निष्ठा रखने वाला, पूर्ण आदर करने वाला है जो सतगुरु को हर क्षण हाज़िर नाज़िर जाने और एक क्षण के लिए भी ग़ाफ़िल न हो, तो उसके लिए कुछ भी करने-धरने की ज़रूरत नहीं है. वह एक क्षण के गुरु प्रेम में ही सब कुछ पा लेता है. 'शब्द ' क्या है? शब्द वह आवाज़ है जो धुर धाम से आई है. शब्द से ही दुनियाँ पैदा हुई और शब्द में ही लय हो जाती ह . जो मुँह से उच्चारण हो वह शब्द नहीं नाम है. संतों ने 'शब्द ' उसी को कहा है जो आपके ख़्याल आपकी सुरत को आकर्षित करके अंतःकरण की ओर ले जाये, ईश्वर के ध्यान में लीन करा दे, जहाँ आपको आनंद ही आनंद मिले .

सब क्रिया कर्म और अभ्यास का नतीज़ा यह है कि सब का सहारा छोड़ कर उस मालिक का सहारा लें जो प्रेम, आनंद और ज्ञान का भंडार है. तभी हमको सच्चा सुःख मिल सकता है और यही हमारा असली लक्ष्य है यह मौका सिर्फ इन्सानी जिंदगी में ही प्राप्त होता है. हर इन्सान का फर्ज़ है कि अपनी ख़्वाहिशात को पूरा करते हुए, यानी दुनियाँ में कर्म करते हुए, अपने असली लक्ष्य को न भूले. अगर वह ऐसा करेगा तो एक न एक दिन अपने असली लक्ष्य को पा जाएगा और पूर्ण ज्ञान, पूर्ण आनंद और ईश्वर का प्रेम हासिल कर लेगा. और अगर अपने असली लक्ष्य को छोड़ कर इंद्री भोग, मन की वासनाओं, बुद्धि की चतुराई और इन सब के अहंकार में फंसा रहेगा तो नीचे उतार होता जायेगा और न मालूम फिर कब उसको इस क़ैद से छूटने का मौक़ा मिले. यह ख़्याल कि आत्मा इन्सानी योनि अख्त्यार करके फिर नीचे नहीं जा सकती, सरासर ग़लत है. जो ऊपर चढ़ता है वह नीचे गिरता है, जो नीचे गिरता है वह ऊपर भी चढ़ता है- यह उसूल हैं. इसलिए आदमी को चाहिये कि अपनी ख़्वाहिशात को धर्म का सहारा ले कर पूरी करे लेकिन उसमें पूँजी, जो उसके पास मुकर्रिर मिक़दार में है, कम से कम लगाए और जो पूँजी छिपी हुई है, यानी जो शक्ति आत्मा की छिपी हुई है, उसको अभ्यास करके हासिल करे और इस पूँजी की मदद से, यानी अभ्यास और सत्संग करके, ऊपर की चढ़ाई करे ताकि ईश्वर से नज़दीक़ी हासिल हो सके. जब तक ईश्वरीय गुण हासिल नहीं होते उसको क़ुरबत (सामीप्य) नसीब नही होती, और जब तक क़ुरबत नसीब नहीं होती आत्मा को चैन नहीं मिल सकता. इसलिए दुनिया के सब काम करते हुए किसी न किसी तरीक़े से

(जिसको आपका मन पसंद करता हो) उस ईश्वर को याद बराबर करते रहना चाहिए. यही सिर्फ एक ज़रिया है जिससे जीव हमेशा-हमेशा का सच्चा और अपार सुःख हासिल कर सकता है. यही हमारा असली परमार्थ है और यही उस परम पिता परमात्मा का दुनिया की रचना करने का मतलब है.

ईश्वर सबको ज्ञान दे .

मनुष्यों की तीन प्रवत्तियाँ

मनुष्य तीन प्रवृत्ति के होते हैं. पहली प्रकार के ऐसे लोग होते हैं जिनका ध्यान शरीर पर अधिक होता है. खाना, पीना, सोना और विषय भोग कर लेना, इनका मुख्य ध्येय होता है. इन्हँ न अच्छे -बुरे से कोई मतलब, न यह परमात्मा नाम की किसी चीज़ को जानते हैं. इनके सिद्धांत के मुताबिक मनुष्य शरीर मिला है वासनाओं की पूर्ति के लिए - खाओ, पियो और मौज़ उड़ाओ. ईश्वर चर्चा से यह दूर रहते हैं. अगर कभी इनसे ईश्वर के बारे में वार्ता भी की जाये तो उसको वो नहीं मानते, उसे ढोंग बताते हैं. कहते हैं कि ईश्वर कोई चीज़ नहीं है, किसने देखा है, इत्यादि. यह लोग सबसे निचली अवस्था के हैं. पशु योनी में गिने जाते हैं. इनके मन का अभी विकास नहीं हुआ है. सोचने -विचारने की शक्ति केवल जानवरों के दर्ज़े की ही है. इन पर ईश्वर चर्चा का कोई प्रभाव नहीं होता और न ही ये लोग उसके पात्र हैं. इसलिए इनके लिए शास्त्रों में कर्म करने का विधान है. कर्म करते - करते इनके मन का विकास होने लगेगा. उसके बाद इन्हें गुरु की आवश्यकता महसूस होगी.

दूसरी प्रवत्ति के मनुष्य वे होते हैं जिनके मन का अच्छी तरह विकास हो चुका है. अच्छाई - बुराई को ख़ूब समझते हैं. बुरी बात से बचना चाहते हैं और अच्छी बात अपनाना चाहते हैं. वे परमात्मा को मानते हैं और उससे डरते हैं. ऐसे लोगों की संख्या सबसे अधिक है. दुनियाँ में इसी श्रेणी के मनुष्य सबसे अधिक हैं और इनको ही आध्यात्मिक सहायता की ज़रूरत है ताकि वे आत्मा को बलवान बना कर उसे मन के बन्धन से आज़ाद करा सकें.

ऐसे लोग कुछ -न -कुछ पिछली कमाई किये होते हैं, सुःख और शान्ति के खोजी होते हैं. उनका जी तो चाहता है कि हम बुराई की बातों से बचें, अच्छे -अच्छे काम करें, परमात्मा की प्राप्ति हमें हो जाये जिससे हम हमेशा की शान्ति पा जायें. लेकिन पिछले संस्कारों के वश वे ऐसे काम कर डालते हैं जिन्हें वे करना नहीं चाहते. ऐसा इसलिए होता है कि मन जन्म -जन्म से उस काम का आदी है और उनकी आत्मा इतनी कमज़ोर हो गयी है कि मन उस पर हावी हो जाता है. वह चाहते हैं अच्छा कर्म करना, हो जाता है बुरा. यह द्वन्द की अवस्था है. ऐसे लोगों को ही गुरु की आवश्यकता है. मनुष्य योनी बीच की योनी है. पशुओं से ऊँची और देवताओं से नीचीं. इसलिए इसमें भले -बुरे का ज्ञान होता है. यहाँ मन का प्रमुख स्थान होता है. मन तीन प्रकार का होता है - सात्विक मन, राजसी मन और तामसी मन. सात्विक मन - जो अच्छाई की तरफ़ ख़्याल रखे, बुराई का जहाँ नाम भी न हो, देवताओं की -सी ख़सलत (स्वभाव). राजसी मन - जो अच्छाई-बुराई दोनों में बरतें, इन्सान की-सी ख़सलत (स्वभाव). तामसी मन - जो हमेशा बुराई में ही बरते. क्या अच्छाहै, क्या बुरा है, यह ख़्याल न हो- जानवरों की-सी ख़सलत (स्वभाव).

इन्सानी ख़सलत वालों के लिये कर्म बन्धन नहीं है. ये प्रेम के भूखे हैं. ये मन के घाट पर अटके हुए हैं जो बीच का घाट है, कभी ऊपर को खिंच जाते हैं, कभी नीचे को. ऐसे ही लोग परमार्थ के सच्चे खोजी होते हैं और अगर वक्त के पूरे सदगुरु इन्हें मिल जायें और पूर्ण समर्पण हो तो उनका कल्याण हो जाता है.

दैवी प्रवत्ति के वे लोग होते हैं जिन्होंने पिछले जन्म में ही सब-कुछ कमाई कर ली है पर कोई ऐसा संस्कार या ख़्वाहिश मरते वक्त बाक़ी रह गयी थी जिसको पूरा करने या भोगने के लिये जन्म लेना पड़ा. इनके अन्दर बुराई का अंश नहीं होता. ये ख़ुद हमेशा अच्छाई ही अच्छाई में बरतते हैं और दूसरों को भी वैसा करने को कहते हैं. इनकी ख़सलत (स्वभाव) देवताओं की-सी होती है. इन्हें करना -धरना कुछ नहीं पडता. जिस संस्कार के वश आये थे उसे भोग कर वापस अपने धाम को चलें जाते हैं. इन्हें ज़्यादा मदद की ज़रूरत नहीं होती. केवल नाम -मात्र के लिये गुरु धारण किया करते हैं.

जिस तरह तीन प्रवत्ति के मनुष्य होते हैं उसी तरह गुरु की भी तीन श्रेणियां हैं -(१) गुरु (२) सदगुरु, और

(३) परमगुरु, यानी जिस्मानी, ख़्याली और रूहानी गुरु. जो लोग निचली अवस्था के हैं, जिनका बाहरी रूप (यानी माद्दा पर) ध्यान ज़्यादा है, मन का विकास अभी पूरा नहीं हो पाया, गुरु का शरीर ही उनका गुरु है. जो लोग इससे ऊँची अवस्था प्राप्त कर चुके हैं, मन पूरी तरह विकसित हो चुका है, गुरु का ख़्याल ही उनका गुरु है. दूसरे शब्दों में यों समझ लीजिये कि ध्यान करते वक्त गुरु का शरीर उनके ध्यान में नहीं आता बल्कि गुरु का ख़्याल ही उनके सामने होता है. उनके अन्दर शब्द जारी हो जाता है और प्रकाश दिखायी देने लगता है. यहीं सदगुरु हैं .

परमगुरु परमात्मा को कहते हैं जो सबका गुरु है. देहधारी गुरु का सहारा लेकर सदगुरु यानी शब्द और प्रकाश तक पहुँचते हैं. शब्द और प्रकाश का सहारा लेकर साधक में प्रेम पैदा हो जाता है. उसके बाद परमगुरु यानी परमात्मा के देश में पहुँच जाते हैं, यानी ॐ का ख़्याल आने लगता है और चारों गतियों (सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य और सायुज्य) से गुज़र कर उससे मिलकर एक हो जाते हैं. इन्हीं जीवन मुक्त आत्माओं को आध्यात्मिक गुरु (रूहानी गुरु) कहते हैं. इनके अन्दर सिवाय परमात्मा के प्रेम के और कोई ख़्वाहिश नहीं होती. सब ख्वाहिशें चाहें वे इंद्रिय, मन, बुद्धि के मुताल्लिक हों, जलकर ख़त्म हो जाती है. यहीं गुरु कहलाने के लायक़ हैं. इनकी सोहबत में बैठने, इनके वचन सुनने, इनका ख़्याल करने से आहिस्ता -आहिस्ता मन -बुद्धि के पर्दे कट जाते हैं. आत्मा अपने असली रूप में ज़ाहिर होती है, परमात्मा का प्रेम दिन पर दिन बढ़ने लगता है और जिज्ञासु एक दिन अपने प्रीतम से मिलकर एक हो जाता है. " पारस लोहा कंचन करत , गुरु करें आप समान ."

राम संदेश - जून १९९१.